श्रीः

गीतावली सटीक।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः।

मङ्गलाचरण—श्लोक।

बालं दिगम्बरं रामं कौशल्यानन्दवर्द्धनम्।
अतसीकुसुमश्यामं दध्योदनमुखं भजे॥ १॥

सोरठा।

जपत रहत सब जाम, जासु नाम ब्रह्मादिकौ।
हरिहर करत प्रनाम, तेहि सिय सियबर चरन कों॥

दोहा।

भरत लषन रिपुदवन पद, बंदि ध्याय हनुमान।
हरिहर टीका रचत है, देहु सुधारि सुजान॥

मूल।

ीलाम्बुजश्यामलकोमलाङ्गं सीतासमारोपित
ौ महाशायकचारुचापं नमामि राम

टीका।

श्याम कमल सम श्यामल कोमल अंग औ सीता जू वाम भाग में भली भांति तें स्थित औ हाथ में अमोघ बाण औ सुंदर सारंग धनुष है जिन के तिन रघुवंशनाथ श्रीराम कों नमस्कार करत हौं। श्रीराम की चारि लीला प्रधान हैं बाल, विवाह, बन और राजलीला। यह चारों श्लोक के एक एक पद से जनाए। नीलाम्बुजश्यामल कोमलाङ्ग तें बाल, औ सीतासमारोपितवामभागं तें विवाह, औ पाणौमहाशायक चारु चापं तें बन, औ नमामिरामंरघुवंशनाथं तें राज्यलीला।

राग असावरी—आजु सुदिन सुभघरी सुहाई। रूप शीलगुन धाम राम नृप भवन प्रगट भए आई॥ १॥ अति पुनीत मधुमास लगन ग्रह बार जोग समुदाई। हरषवन्त चर अचर भूमिसुर तनुरुह पुलकि जनाई॥ २॥ बरषहिं बिबुधनिकर कुसुमावलि नभ दुंदुभी बजाई। कौसल्यादि मातु सब हरषित यह सुष बरनि न जाई॥३॥ सुनि दसरथ सुत जन्म लिए सब गुरजन विप्र बुलाई। बेद विहित क[illegible] क्रिया परम सुचि आनंद उर न समाई॥ ४॥ स[illegible] बेदधुनि करत मधुर मुनि बहुबिधि बाजु बधाई। पुरबा[illegible] प्रियनाथ हेतु निज निजसंपदा लुटाई॥ ५॥ मनि त[illegible] बहु केतु पताकनि पुरी रुचिरकरि छाई। मागध सुत द्वार बंदीजन जहँ तहँ करत बड़ाई॥ ६॥ सहज सिंगार किए बनिता चलि मंगल बिपुल बनाई। गावहिं देहिं अ[illegible] [illegible]दित चिरजियो तनय सुषदाई॥ ७॥ बीथिन्ह कुमकुम[illegible] [illegible]जा अगरु अबीर उड़ाई। नाचहिं पुर नर नारि प्रे[illegible] [illegible] बिसराई॥ ८॥ अमित धेनु गज तुरग बसन [illegible] [illegible]। देत भूप अनुरूप जाहि जोइ सकल

गृह आई ॥ ९ ॥ सुषी भए सुर संत भूमिसुर षलगनमन मलिनाई। सबहि सुमन बिकसत रबि निकसत कुमुदबिपिन बिलषाई ॥ १० ॥ जो सुषसिंधु सकृत सीकर तें सिव बिरंचि प्रभुताई। सोइ सुष उमगि अवध रह्यो दसदिसि कवन जतन कहौं गाई ॥ ११ ॥ जे रघुबीरचरन चिन्तक तिन्ह की गति प्रगट देषाई। अबिरल अमल अनूप भगति दृढ तुलसिदास तब पाई ॥ १२ ॥ १ ॥

सखी प्रति सखी कहति है आजु सुंदर दिन औ सुंदर सुभ घरी में रूप शील औ गुन के धाम श्री राम महाराज दशरथ के गृह में आइ के प्रगट भए। भवन प्रगट भए आई कहिवे को यह भाव कि अपनी इच्छा करि परधाम ते आइके प्रगटे, गर्भ तें नहीं ॥ १ ॥ अति पवित्र चैत्रमास कर्क लग्न पांच ग्रह उच्च, मेष के [illegible] मकर के मंगल, तुला के शनैश्च[illegible] के बृहस्पति, मीन के [illegible] जन्म दिन 'मेरुतंत्र' औ 'राम[illegible]' में सोमवार औ 'सूरसागर' में बुधवार औ गोसाईं जी मंगलवार एहि ग्रंथ में लिखे सो कल्पांतर करि व्यवस्थाकरना औ योग समुदाय सुकर्म्मादि हैं। चर जंगम अचर स्थावर औ भूमिसुर ब्राह्मण हर्षवन्त हैं सो कैसे जानि परयौ तेहि हेतु लिखत हैं कि तनुरुह कहैं रोम सों पुलक करि जनाय दिए। शंका। अचर की पुलकावली कैसे जानि परी। उत्तर। अचर पर्वत वृक्षादि तिन के रोम रूप तृण पत्रादि हैं ते लहलहाय उठे सोई पुलकना है। चर अचर से भूमिसुर को पृथक लिखिवे को यह भाव कि श्रीरघुनाथ कों ब्रह्मण्य जानि ब्राह्मणन कों सब तें अधिक आनंद भयो अतएव भागवत में लिखा। "ब्रह्मण्यः सत्य-[illegible]श्च रामो दाशरथि र्यथा।" मधुमास को अति पुनीत कहिवे को यह [illegible] कि वर्ष का आदि मास है अतएव श्रीदशरथ महाराज अश्वमेध [illegible] चैत्रही में आरम्भ किए। बाल्मीकीय रामायण में लिखा ॥ २ ॥ [illegible]वतन के समूह आकाश में नगारा बजाइ पुष्पसमूह बरषत हैं। नगारा [illegible]जाइवे को यह भाव कि रावण के भय तें छिपे छिपे फिरत[illegible]

आजु नगारा बजाइ प्रगटे औ श्रीकौशल्या जू आदि सब माता हर्षित हैं यह सुख बरनि नहीं जात है जाते चौथे पन में पुत्र पाए याते मातन को सुख अकथनीय ठहराये ॥ ३ ॥ दशरथ महाराज पुत्रजन्म सुनि सब कुलवृद्ध औ ब्राह्मणों को बोलाय लिए। वेदविहित नांदीमुख श्राद्धादि परम शुचि क्रिया करि जो आनंद भयो सो उर में नहीं समात है। गुरुजन विप्र दोऊ विप्र बोलाइबे को यह भाव कि लौकिक क्रिया गुरुजन औ बैदिक क्रिया ब्राह्मण सम्हारैं ॥ ४ ॥ मधुर स्वर तें मुनि गृह में वेदधुनि करत औ बहु प्रकार ते बधाई बाजति है । पुरवासीप्रिय जो नाथ हैं तिन के हेतु अपनी अपनी संपदा लुटाई। प्रियनाथ कहिबे को यह भाव कि महाराज के पुत्र होए विना जो अनाथ रहे सो सनाथ भए ॥ ५ ॥ तोरन बंदनवार केतु ध्वजा पताका फरहरा वा केतु सचिन्ह जैसे विष्णु की ध्वजा में गरुड़चिन्ह औ शिव की ध्वजा में वृषचिन्ह [illegible] ताका चिन्हरहित, मागध कत्थक, सूत पौराणिक, बंदी भाट ॥ [illegible] राणिकाः प्रोक्ता मागधा वंशशंसकाः। बंदिनस्त्वमलप्रज्ञाः [illegible] ॥ ६ ॥ सहज [illegible] भांति तें किए रहीं तैसहीं उठि धांई । मंगल विपुल हरद [illegible] सहज शृंगार को यह भाव कि मंगल बनाइबे के आनंद में शृंगार सजना भूलिगईं ॥ ७ ॥ गलिन में केसर औ अरगजा को कीच है औ अगर का धुआं औ अबीर उड़त है औ देहदसा बिसराइ प्रेम में भरि पुर के नर नारि नाचत हैं ॥ ८ ॥ गज हाथी, तुरंग घोड़ा, जातरूप सोना, सिद्धि अणिमादिक ॥ ९ ॥ देवता संत औ ब्राह्मण सुखी भए औ खलगण के मन में मलिनाई आई अर्थात् दुखी भए जैसे सूर्य के निकसत सब फूल फूलत है पर कोई को वन बिलखात अर्थात् संपुटित होत है। भाव सपेदी भीतर जात स्याही ऊपर आयजात है ॥ १० ॥ जो सुख रूप समुद्र की एक बूंद ते शिव ब्रह्मा की प्रभुताई है सो [illegible] की अयोध्या जी के दशो दिशा में उमगि रह्यो वा अयोध्याजी [illegible] उमगि के दशो दिशा में जाय रह्यो ताको कवन जतन तें [illegible] कहौं, भाव बूंद को जो भली भांति न जानै सो समुद्र कों कैसे बखानै ॥ [illegible]

[illegible]घनाथ के चरन के चिन्तक हैं तिन की गति प्रगट देखि परी [illegible]

अर्थात् ज्ञानिन कों कहीं प्रगट न भए औ भक्तन के पुत्र है प्रगट भए भाव जो स्ववश रह्यो सो परवश भयो, अंतरालरहित निर्मल औ पमारहित दृढ़ भक्ति तब तुलसीदास ने पाई। भाव केवल भक्ति करि घुनाथ के प्रगटे तें कर्मज्ञान को भरोसा छोड़ि केवल भक्ति ही दृढ़ रि लियो ॥ १२ ॥ १ ॥

राग जयतश्री—सहेली सुनु सोहिलोरे सोहिलो सोहिलो ोहिलो सोहिलो सब जग आजु। पूत सपूत कौसिला जायो चल भयो कुलराजु ॥ १ ॥ चैत चारु नौमी सिता मध्य गगन त भानु। नषत जोग ग्रह लगन भले दिन मंगल मोदनि-धानु ॥२॥ ब्योम पवन पावक जल थल दिसि दसहु सुमंगल-मूल। सुर दुंदुभी बजावहिं गावहिं हरषहिं बरषहिं फूल ॥३॥ भूपतिसदन सोहिलो सुनि बाजे गहगहे निसान। जहं तहं सजहिं कलस ध्वज चामर तोरन केतु बितान ॥ ४ ॥ सींचि सुगंध रचै चौकै गृह आंगन गली बजार। दल फल फूल दूब दधि रोचन घरघर मंगलचार ॥ ५ ॥ सुनि सानंद उठे दस-स्यंदन सकल समाज समेत। लिये बोलि गुर सचिव भूमिसुर प्रमुदित चले निकेत ॥ ६ ॥ जातकर्म करि पूजि पितर सुर ये महिदेवन दान। तेहि अवसर सुत तीन प्रगट भए मंगल द कल्यान ॥ ७ ॥ आनंद महं आनंद अवध आनंदबधावन इ। उपमा कहै चारिफल की मोकों भलो न कहै कबि कोइ ॥ सजि आरती बिचित्र थार कर जूथ जूथ बरनारि। चलीं बधावन लैलै निजनिजकुलअनुहारि ॥९॥ असही ही मरहु मनहिमन बैरिन बढ़हु बिषाद। नृपसुत चारि जीवहु संकरगौरिप्रसाद ॥ १० ॥ लैलै ढोव प्रजा

प्रमुदित चलि भांतिभांति भरिभार। करहिं गान करि आ
राय की नाचहिं राजदुआर ॥ ११ ॥ गज रथ बाजि बाहिनी
बाहन सबनि संवारि साज। जनु रतिपति रितुपति कोसलपु
बिहरत सहितसमाज ॥ १२ ॥ घंटा घंटि पखाउज आउझ
झांझ बेनु डफ तार। नूपुरधुनि मंजीर मनोहर करकंकन
झनकार ॥१३॥ नृत्य करहिं नटनटी नारिनर अपने अपने
रंग। मनहुं मदन रति बिबिध बेषधरि नटत सुदेस सुधंग ॥१४
उघटहिं छंदप्रबन्ध गीतपद रागतानबंधान। सुनि किन्न
गन्धर्ब सराहत बिथके हैं बिबुधबिमान ॥ १५ ॥ कुंकुम अगर
अरगजा छिरकहिं भरहिं गुलाल अबीर। नभ प्रसून झरि
पुरी कोलाहल भइ मनभावति भीर ॥१६॥ बडी बयस बिधि
भयो दाहिनो गुरसुर आसिर्बाद। दसरथसुकृतसुधासागर सब
उमगे हैं तजि मरजाद ॥ १७ ॥ ब्राह्मन बेद बंदि बिरुदावलि
जयधुनि मंगलगान। निकसत पैठत लोग परस्पर बोलत
लगि लगि कान ॥ १८ ॥ बारहिं मुकुता रतन राजमहिषी
पुर सुमुखि समान। बगरे नगर नेवछावरिमनिगन जनु जु
जवधान ॥ १९ ॥ कीन्हि बेदबिधि लोकरीति नृप मंदि
परमहुलास। कौसल्या कैकई सुमित्रा रहसबिबस रनिवास
॥ २० ॥ रानिन दिए बसन मनि भूषन राजा सहनभंडार।
मागध सूत भाट नट जाचक जहं तहं करहिं कबार ॥ २१
बिप्रबधू सनमानि सुआसिनि जनपुरजन पहिराइ। सनमा
अवनीस असीसत ईस रमेस मनाइ ॥ २२ ॥ अष्टसिद्धि
निद्धि भूति सब भूपतिभवन कमाहिं। समउ समाज राज
रथ को लोकप सकल सिहाहिं ॥ २३ ॥ को कहि सकै

बासिन को प्रेम प्रमोद उछाहु। सारद सेस गनेस गिरीसहिं अगम निगम अवगाहु ॥२४॥ सिव बिरंचि मुनि सिद्ध प्रसंसत बडेभूप के भाग। तुलसिदास प्रभु सोहिलो गावत उमगि २ अनुराग ॥ २५ ॥ २ ॥

सहेली प्रति सहेली की उक्ति है। सहेली सखी वा सहेली सहैवाली जेहि को यह उत्सव सोहात अर्थात् असही दुसही नाहीं। सोहिलो कहैं उत्सव सब जगत में सोहिला है याते बहुबार लिखे वा पांच वेर लिखवे तें पांचो देवतन को उत्सव युक्त जनाए वा पंचभूत सब हर्षित भए जे पहिले रावणादि करि दुखी रहे ताते पांचबार वा पहिले सोहिलो रे जो लिखे सो सुनिवे में है फेरि चारि बार लिखे जातें चारि भाइन का जन्मोत्सव है वा आनंद तें बहुबार लिखे। सपूत कहिवे को यह भाव कि जन्मतै तीन भैयन को और बोलाए वा दिन ग्रहादि भले तें जाने कि सपूती करैंगे। अचल भयो कुलराज कहिवे को यह भाव कि पुत्र भए बिना जो चल होत रह्यौ सो अचलभयौ ॥१॥ शुक्ल पक्ष मध्यान्ह काल औ बार मंगल आनंद को निधान है ॥२॥ आकास वायु अग्नि जल औ थल करि पृथ्वी लेना औ दशोदिशा में सुमंगल [illegible] मूल है आकाशादि पांचो लिखवे ते पांचो भूतन को हर्ष जनाए ॥३॥ [illegible]ान नगारा चामर कहैं चमर बितान सामिआना ॥ ४ ॥ सुगंध [illegible] गुलाबादि दल तुलसी विल्वपत्रादि फल सुपारी नारिअर आदि [illegible]चन गोरोचन वा रोरी ॥ ५ ॥ दशस्यंदन दशरथ महाराज निकेत महल ॥ ६ ॥ जातकर्म नांदीमुखश्राद्ध जेहि में दही अक्षत से श्राद्ध औ दुर्वादि जल से तर्पण होत है ताकों करि पितर सुर पूजि ब्राह्मणन को दान दिए। शंका। सूतक में पूजा औ दान कैसे किए। उत्तर। जब लौं नार नहीं छीना जाय तबलों सूतक नाहीं लगत है। तेहि अवसर [illegible] तीन पुत्र और प्रगट भए मंगल मुद कल्यान अर्थात् मंगल रूप [illegible]त जी मुदरूप लक्ष्मण जी औ कल्यान रूप शत्रुघ्न जी हैं ॥ ७ ॥ [illegible]थ के जन्म के आनंद [illegible] तीनों भैयन के जन्म भयो ताते [illegible] महं आनंद लिखे। अजोध्या जी में आनंद युक्त बधावा होत है

चारो फल सम चारो भैयन को कहे ते हम को कोऊ कवि भला न कहैगो अर्थात् जाको जन मोक्षादि दाता है जात तेहि को मोक्षादि की उपमा कैसे संभवै ॥ ८ ॥ विचित्र थार अद्भुत थार वरनारि अहिवाती कुलअनुहारि कुल के योग्य, भाव ब्राह्मणी सतोगुणी ठाठ से औ क्षत्रिया रजोगुनी ठाठ से इत्यादि ॥ ९ ॥ असही कहे जो और की बढ़ती न सहि सकै दुसही कहैं दुख करि परबढ़ती सहैं वा दुसही दुष्ट ए सब मन ही मन अर्थात् कुढ़ि के मरहु औ बैरिन को विषाद बढ़ौ ॥ १० ॥ ढोब कहैं भेंट की सामग्री अर्थात् अपने अपने जाति के अनुरूप जैसे अहीर दही, वरई पान इत्यादि आन कहैं दोहाई ॥ ११ ॥ वाहिनी जो सेना ताको वाहन जो नायक तिन ने हाथी रथ घोड़ा सवनि के साज संवारे "वाहयतीति वाहनः" इस व्युत्पत्ति ते नायक को वाचक भयो मानो सेनापति नहीं है काम है, सेना नहीं है वसन्तऋतु है सो अयोध्या जी में समाज सहित विहरत है इहां समाज भूषण वसनादि हैं वा गजरथ औ तुरंगरथ औ वाहिनी वाहन अर्थात् घोड़ी घोड़ा हथनी हाथी आदि सवनि के साज संवारे अपर पूर्ववत ॥१२॥ घंटी हाथी आदि के घंटी हाथिन के झेला की औ सादनी पायक आदि की आउज कहैं तासा अरवी में तासा को आउज कहत हैं, तार करताल मंजीर पावजेब ॥ १३ ॥ अपने अपने रंग कहैं चाल तें अर्थात् संगी नाचनेवाले संगीत की चाल तें औ तांडव नाचनेवाले तांडव की तें इत्यादि । नट नटी नारि नर नृत्य करत हैं मानौ काम रति दि वेष धरि सुदेश कहैं सुंदर औ सुघंग कहैं सूधे अंग तें नाचत हैं अर्थात् हाथ मुंह टेढा नाहीं होए पावत है वा सुघंग शुद्ध अंग नृत्य के ॥१४॥ छंद औ प्रबन्ध औ गीत के पद राग तान बंधान पूर्बक उघटहिं अर्थात् गावहिं जैसे ध्रुपद तिलाना है तैसे छंद प्रबन्ध गीत भी है संगीत ग्रंथन में स्पष्ट बंधान कहैं लय अर्थात् गीत समाप्त पर्यन्त तान ताल बराबर चला जाय वार बरावर भी भेद न पड़ै सुनि के गंधर्व किन्नर सराह हैं कि अस हम नहीं गाय सकते औ देवतन के विमान विशेष थ गए अर्थात् अचल है गए भाव जो स्वर्ग में नहीं सुने रहे सो सुने ता मोहि रहे ॥१५॥ तीखुर आदि से अति मेही औ अति लाल जो बनत

ताको गुलाल कहत हैं औ तेहि से कम लाल औ मोटा जो जोन्हरी आदि के पिसान से बनत है ताको अबीर कहत हैं। कोलाहल अधिक शब्द। मनभावती भीर जो भीर बहुत दिन से चाहत रहे सो भई ॥ १६ ॥ बड़ी बयस साठि हजार बरिस की अवस्था में गुरु औ देवता के आशिर्वाद ते बिधाता दाहिनो भयो "षष्टि र्वर्षसहश्राणि जातस्य मम कौशिक" इति श्रीमद्रामायणे। महाराज दशरथ के सुकृत रूप जे अमृत के सब समुद्र हैं अर्थात् चारो समुद्र, ते मर्याद कहैं किनारा छोड़ि उमगै भाव जैसे समुद्र जो किनारा छोड़ि उमगै तौ सब जग डूबि जाय सो एक को को कहै सब सुकृत समुद्र उमगे एहि तें यह ब्यंजित किए कि सब ब्रह्माण्ड आनंद में डूबि गयो ॥ १७ ॥ बिरदावली यश। लगि लगि कान कहिबे को यह भाव कि बेदादि धुनि तें जो महाशब्द भयो तातें सुनात नाहीं कान में लगि जब जोर सें बोलत हैं तब सुनात है ॥१८॥ मोती जवाहिर आदि श्री महाराज की पटरानी औ पुर की स्त्रीगन समान नेवछावर करहिं। एहि तें यह जनाए कि पुरवासिनिनि को भी आनंद महारानिन के तुल्यै भयो नेवछावर करत में जो गिरे मनिसमूह ते बगरे कहैं छितिराने नगर में ज्वार जोन्हरी औ जब धान के समान ॥ १९ ॥ मंदिर में परम हुलास पूर्विक बेद लोक रीति महाराज कीन्हे अर्थात् बेदरीति जातसंस्कार नांदिमुखयिक श्राद्धादि पूतना रक्षणादि, लोकरीति नार गाड़ब औ राई नोन वारब औ चौकी हेतु आगि आदि राखब, सब रनिवास कौशल्या कैकेई सुमित्रा आदि रहसाबिवश कहिए हर्ष के विशेष बस भईं ॥ २० ॥ गहन कहैं संपूर्ण कबार कहैं यश ॥ २१ ॥ सुआसिनि कहैं सावित्री कन्यावर्ग, जन दासादि, पुरजन पुरवासी, अवनीश दशरथ महाराज ईश रमेश विष्णु ॥ २२ ॥ आठो सिद्धि औ नवो निधि सब ऐश्वर्य युक्त महाराज के भवन में कमाहिं कहैं परिचर्या करत हैं। लोकप इन्द्रादि। "अणिमा महिमा चैव गरिमा लघिमा तथा। प्राप्तिःप्राकाम्यमीशित्वं वशित्वञ्चाष्टसिद्धयः॥ पद्मो स्त्रियां महापद्म शङ्खोमकरकच्छपौ। मुकुन्दकुन्दनीलाश्च खर्वश्च निधयोनव॥ इति शब्दार्णवे" २३ गिरीश शिव अगम शास्त्र निगम बेद इन्ह को अथाह है व शिवादि को अगम बेद को अथाह है २४।२५।२

राग बिलावल—आजु महामंगल कोसलपुर सुनि नृप के सुत चारि भये। सदन सदन सोहिलो सुहावन नभ अरु नगर निसान हये॥ १॥ सजिसजि जान अमर किन्नर मुनि जानि समयसम गानठये। नाचहिं नभ अप्छरा मुदित मन पुनिपुनि बरषहिं सुमनचये॥ २॥ अति सुष बेगि बोलि गुर भूसुर भूपति भीतर भवन गये। जातकर्म करि कनक बसन मनि भूषित सुरभिसमूह दये॥ ३॥ दल रोचन फल फूल दूब दधि जुबतिन्ह भरिभरि थार लये। गावत चलीं भीर भइ बीथिन्ह बंदिन बांकुरि बिरद बये॥ ४॥ कनककलस चामर पताक ध्वज जहंतहं बंदनवार नये। भरहिं अबीर अरगजा छिरकहिं सकललोक एकरंग रये॥५॥ उमगि चल्यो आनंद लोक तिहुं देत सबनि मंदिर रितये। तुलसिदास पुनि भरेइ देषियत रामकृपाचितवनि चितये॥ ६॥ ३॥

हये कहैं बजे॥ १॥ समैसम गान ठये अर्थात् सोहरादि गान ठाने, चये समूह॥ २॥ सुरभी धेनु॥ ३॥ बांकुरिबिरद उत्कृष्ट यश, बये कहैं बदे॥४॥ रए रंगे॥५॥ रितये खाली किये॥६॥ टिप्पणी–जान विमान। अमर देवता। सुमनचये सुमन के समूह। भूसुर ब्राह्मण। जातकर्म नंदीमुख श्राद्ध। दल तुलसी। रोचन हलदी। फल सुपारी नारियल। जुवतिन्ह युवा स्त्रीगण। बीथिन्ह गलियों में। बये कहे वा किये। कनककलस सोने का कलस। तीनों लोक में आनंद उमड़ चला। सभी अपना २ घर खाली करके दान देने लगे। तुलसी दास जी कहते हैं कि श्री रामचन्द्र की कृपा दृष्टि से फिर भरे के भरे देख पड़ते हैं।

राग जयतश्री—गावैं बिमल बिबुध बरबानी। भुवन कोटि कल्यान कंदु जायो पूत कोसिलारानी॥ १॥ मास पाष

तिथि बार नषत ग्रह योग लगन सुभ ठानी। जल थल गगन प्रसन्न साधु मन दसदिसि हिय हुलसानी ॥ २ ॥ बरषत सुमन बधाव नगर नभ हरष न जात बषानो । ज्यौं हुलास रनिवांसनरेसहिं त्यौं जनपद रजधानी ॥ ३ ॥ अमर नाग मुनि मनुज सपरिजन बिगतबिषाद गलानी। मिलेहि मांझ रावन रजनीचर लंकसंक अकुलानी ॥ ४ ॥ देवपितर गुरुबिप्र पूजि नृप दियेदान रुचि जानी। मुनि बनिता पुरनारि सुआसिनि सहसभांति सनमानी ॥ ५ ॥ पाइ अघाइ असीसत निकसत जाचकजन भए दानी । यों प्रसन्न कैकई सुमित्रहिं होहुमहेस भवानी ॥ ६ ॥ दिन दूसरे भूप भामिनि दोउ भई सुमंगलषानी। भयो सोहिलो सोहिलो मो जनु सृष्टि सोहिले सानी ॥ ७ ॥ नाचत गावत भो मनभावत सुष अवध अधिकानी। देत लेत पहिरत पहिरावत प्रजा प्रमोद अघानी ॥ ८ ॥ गान निसान कोलाहल कौतुक देषत दुनी सिहानी। हरि बिरंचि हरपुर सोभाकुलि कोसलपुरी लुभानी॥९ आनंद अवनिराजरवनी सब मागहु कोषि जुडानी। आसिष देदै सराहहिं सादर उमा रमा ब्रह्मानी ॥ १० ॥ बिभवविलास बाढि दसरथकी देषि न जिनहिं सोहानी। कीरति कुसल भूति जय रिधि सिधि तिन्ह पर सबै कोहानी ॥ ११ ॥ छठी बारही लोकबेदबिधि करि सुविधानविधानी। राम लषन रिपुदमन भरत धरे नाम ललित गुरज्ञानी ॥ १२ ॥ सुकृत सुमन तिल मोद बासि बिधि जतन जंत्र भरि घानी। सुषसनेह सब दियो दसरथहिं षरि षलेल थिर थानी ॥ १३ ॥ अनुदिन उदय उछाह उमग जग घरघर अवधकहानी। तुलसी

रामजन्मजस गावत सो समाज उर आनी ॥ १४ ॥ ४ ॥

बिबुध देवता कल्यान कंद कल्यान के मूल वा मेघ जायो उत्पन्न कियो ॥ १ ॥ सुभ ठानी शुभस्थानी। जल थल आकाश औ साधुन के मन प्रसन्न होत भयो औ दशो दिशा को हृदय हुलसत भयो। शंका। जलादि प्रसन्न कैसे भए। उत्तर। जल निर्मल भयो पृथ्वी कृषी संपन्न भई, गगन मेघादिरहित भयो, सोई प्रसन्न होना है ॥ २ ॥ जनपद देश राजधानी अयोध्या ॥ ३ ॥ देवता नाग मुनि मनुज परिवार सहित, बिषाद गलानि रहित भए औ रावण राक्षसों के मिलेहिं माझा अर्थात् फुट बिना लंका शंका तै अकुलात भई 'मिलेहिं माझबिधि बात बिगारी' जैसे यह चौपाई में मिलेहिं माझ का अर्थ है तैसे इहां जानना। वा जब देवता आदि बिषाद गलान रहित भए सो बिषाद गलानादि रावन रजनीचर के माझ मिलेहिं ते अर्थात् डेरा किए ते लंका शंका तें अकुलात भई ४।५।६ दूसरे दिन महाराज की दोऊ भामिनी कैकेयी जू सुमित्रा जू सुमंगल की खानि भई अर्थात् श्री राम जी के दूसरे दिन दशमी को पुष्य नक्षत्र मीन लग्न में श्री भरत जी को प्रादुर्भाव भयो भरत जी के दूसरे दिन एकादशी को श्लेषा नक्षत्र कर्क लग्न में लक्ष्मण जी शत्रुघ्न जी को प्रादुर्भाव भयो। उत्सव में उत्सव भयो मानो सृष्टि उत्सव में सानी है श्री मद्रामायणे "पुष्येजातस्तुभरतो मीनलग्ने प्रसन्नधीः सार्पे जातौ तु सौमित्री कुलीर भ्युदिते रवौ। पाद्मेऽन्येद्युःपाञ्चजन्यात्मा कैकेय्यां भरतोऽभवत्। तदन्येद्युःसुमित्राया मनन्तात्मा च लक्ष्मणः। सुदर्शनात्मा शत्रुघ्नो द्वौ जातौ युगपत्प्रिये ॥" अतएव श्री गोसाईजी छठी तीन दिन में स्पष्ट लिखे त्यौं आजु कालि हूं परों जागर होहिंगे नेवते दिए। शंका। पहिले तेहि अवर सुत तीन प्रगटभए मंगल मुद कल्यान एहि पद में एकै दिन सब भाइन का जन्म जनाए औ इहां तीन दिन में कहे सो कैसे। उत्तर। कल्पांतर करि याको व्यवस्था जानना ॥ ७ ॥ प्रमोद आनंद ॥ ८ ॥ दुनी संसार, कुलि सब ॥ ९ ॥ पृथ्वीपति की रानी आनंदित भई माग कोख ते जुड़ात भई। भाव माग तो पति ते जुड़ानै रह्यो पर पुत्र भए ते कोखिउ करि जुड़ानी वा आनंद की भूमि जे महाराज की रानी ते भाग औ कोखि ते जुड़ात भई। रमा उमा ब्रह्माणी

के सराहिवे को यह भाव कि विश्व के पिता को पुत्र बनाए तातें धन्य हैं ॥ १० ॥ बिभव का विस्तार औ वंश की वृद्धि दशरथ महाराज की देखि कै जिन को न सोहानी तिन्ह पर यश मंगल ऐश्वर्य जय रिद्धि औ अणिमादिक सिद्धि सबै कोहानी भाव ए सब ताको त्याग किए ॥ ११ गुरु ज्ञानी बिधानी जो श्री वशिष्ट जू सो छठी औ बरही की लोक वेद बिधि कों सुंदर बिधान तें करि राम लषन रिपुदवन भरत सुंदर नाम धरे। इहां छन्दोनुरोध ते क्रमपूर्वक नाम न लिखे ॥१२॥ पहिले तिल फूल में बासा जात है फेर पेरा जात है तब फुलेल होत है ताको रूपक कहत हैं ब्रह्मा ने सुकृत रूप सुगंध दार फूल में आनंद रूप तिल को वासि कै यत्न रूप कोल्हू मे घानी भरि पेरिकै सुख रूपी फुलेल दशरथ महाराज कों दिए औ खरी औ खलेल कहैं फोकट जो सो थिरथानी कहैं देवता तिन को दिए ॥१३॥ प्रति दिन उछाह को उदै औ उमंग है औ जगत में घर घर अयोध्या जी की कहानी है रही है सो समाज उर मैं आनि कै तुलसी रामजन्मयश गावत है। भाव जाते हमारे हृदय में भी उछाह को उमंग उदय होय ॥ १४ ॥ ४ ॥

टिप्पणी—महाराज ने देव पितर गुरु और ब्राह्मणों को पूजि के रुचि जान अर्थात् रुचि अनुकूल दान दिये। मुनिपतनियों को और पुर की नारियों और सुआसिनियों का अनेक प्रकार से सम्मान किया याचकों को इतना दान दिया कि वे लोग आशीर्बाद देते हुए दानी होकर राजद्वार से निकलते हैं अर्थात् इतना अधिक दान मिला और ऐसा आनन्द कि वे लोग भी दानी हो गये। आशीर्वाद में कहते हैं कि हे महेश भवानी ! ऐसेही केकई और सुमित्रा पर प्रसन्न होहु।

रामकेदारा—अवध बधावने घर घर मंगल साज समाज। सगुन सोहावने मुदितए कै सब निज निज काज ॥ छंद ॥ निजकाज सजत संवारि पुर नर नारि रचना अनगनी। गृह अजिर अटनि बजार बीथिन्ह चारुचौके बिधिघनी ॥ चामर पताक बितान तोरन कलस दीपावलि बनी। सुष सुकृत सोभामयपुरी बिधि सुमति जननी जनु जनी ॥ दो०—चैत

चतुरदश चांदनी, अमल उदित निसिराजु। उडगन अवली लसी दस दिसि, उमगत आनन्द आजु॥ छन्द। आनन्द उमगत आजु बिबुध विमान बिपुल बनायकै। गावत बजावत नटत हरषत सुमन बरषत आइकै॥ १॥ नर निरषि नभ सुर पेषि पुर छवि परस्पर सचुपाइकै। रघुराज साज सराहि लोयनलाहु लेत अघाइकै॥ २॥ दो०—जागिय राम छठी सजनोरी, रजनी रुचिर निहारि। मंगल मोद मढी मूरति, जहं नृपबालक चारि॥ छंद—मूरति मनोहर चारि बिरचि बिरंचि परमारथमई। अनुरूप भूपहि जानि पूजन योग बिधि संकर दई। तिन की छठी मंजुल मढी जगसरस जिन्ह की सरसई। किए नींद भामिनि जागरन अभिरामिनी जामिनि भई॥ ३॥ दो०—सेवक सजग भये समय, सुसाधनसचिव सुजान। मुनिवर गुरु सिषये लौकिक, वैदिक बिबिधि बिधान॥ छंद। वैदिकबिधान अनेक लौकिक आचरत सुनि जानिकै। बलिदान पूजा मूलिकामनि साधि राषी आनिकै॥ जो देव देवी सेइयत हितलागि चितसनमानिकै। ते तंत्रमंत्र सिषाइ राषत सबन सो पहिचानिकै॥ ४॥ दो०। सकल सुआसिनि गुरजन, पुरजन पाहुने लोग। बिबुध बिलासिनि सुरमुनि, जाचक जो जेहि जोग॥ छंद। जेहि जोग जे तेहि भांति ते पहिराइ परिपूरन [illegible]। जे कहत देत असीस तुलसीदास ज्यों हुलसतहिए॥ ज्यों आजुकालिहु परव जागर होहिंगे नेवते दिए। ते धन्य पुन्यपयोधि जे तेहिसमैसुषजीवन जिए।५। दो०। भूपतिभागबली सुरनर, नाग सराहि सिहाहिं। तियवरवेष अली संपति, सिधिअणिमादिक माहिं॥ छंद।

अनिमादि सारद सैलनंदिनि बाल लालहि पालहीं। भरि जनम जे पाये न ते परितोष उमा रमा लही ॥ निजलोक बिसरे लोकपनि घर कौन चरचा चालहीं। तुलसी तपत तिहुताप जग जनु प्रभु छठी छाया लही ॥ ६ ॥ ५ ॥

अब छठी लिखत हैं, कवि की उक्ति है। अवध में मंगल साज समाज औ बधावा घर घर है औ निज निज काज करत सगुन सोहावने होत ताते सब मुदित हैं। पुर नर नारि अगनित रचना संवारि कै जाको जो काज ताको सजत हैं। गृह आंगन अटारिन बजार औ गलिन में घनी बिधि ते सुंदर चौकैं औ चवंर पताका चंदवा बंदनवार कलश औ दीपावली बनी है। सुख सुकृत सोभामय पुरी जो श्री अयोध्या जू तिन को ब्रह्मा जू की सुंदर मति रूपा जननी ने मानो उत्पन्न करी है ॥ अब सखी प्रति सखी की उक्ति है। आज उजेरी चैत चतुर्दशी को निर्मल अर्थात् धूम मेघ आदि रहित निशिराज कहैं चन्द्रमा प्रकाशमान हैं औ तारागण की पंक्ति सोभित भई है औ दशो दिशा में आनंद उमगत है आजु देवता अनेक बिमान बनाय के आनंद उमगत गावत बजावत नाचत हर्षित होत आय के सुमन बर्षत हैं ॥१॥ नर आकाश देखि औ देवता पुरछबि देखि परस्पर आनंद पाय रघुराज को साज सराहि अघाय कै लोचन लाभ लेत हैं ॥२॥ री सखी राम छठी की राति सुंदर निहारि के जागिए। मंगल औ मोद सोई मंदिर है मंदिर में मूरति रहति है, इहां महाराज के चारों बालक सोई मूर्ति हैं परमार्थ रूप मनोहर चारि मूर्ति ब्रह्मा सुंदर रचिकै ताके अनुरूप महाराज ही को पूजन योग्य जानि ब्रह्मा शिव मिलि दई तिन की छठी सुंदर मंदिर में है वा तिन की छठी मंजुल कहैं सुंदर मंदिर है औ जिन्ह की सरसई करि जगत सरस है सो नींद किए औ भामिनि जागरन किए ताते रमणीया रात्रि भई वा जिन्ह की सरसई ते जगत सरस है तिन्ह की छठी रूप सुंदर मढ़ी में और को को कहै नींद रूपा भामिनि भी जागरन किये ताते रमणीया रात्रि भई ॥३॥ सेवक समय के सुंदर साधनहारे औ सचिव सुजान सब सजग भए तिन के

मुनिवर जे गुरु ते लौकिक वैदिक अनेक प्रकार के विधान सिखाए तब सुनि जानि कै अनेक वैदिक लौकिक विधान को आचरन करत हैं बलिदान पूजाहेतु औ जड़ी औ मणि आनि कै साधि राखी औ हित लागि चित ते सनमानि कै जे देव देवी सेइयत है ते देव देवी के तंत्र मंत्र सबनि सो पहिचानि के सिखाय राखत । पहिचानि कै कहिवे को यह भाव कि जेहि देवता में जाकी प्रीति है वा ते देव देवी सब मुनिवरन सो पहिचान करि के अपना २ जंत्र मंत्र सिखाय राखत। सिखाइवे को यह भाव कि जो एहिवार न पूजे जाहिंगे तो फेर न कोऊ पूजैगो ॥४॥ संपूर्ण सोहागिनि श्रेष्ठवर्ग पुरजन पाहुन विबुध विलासिनि कहैं देवपत्नी देवता मुनि औ याचक लोग जो जेहि योग के हैं तेहि को तेहि भांति वस्त्र भूषणादि पहिराय परिपूरण किए जैसे तुलसीदास को हृदय हुलसत है तैसे हुलसत हिए जय कहत असीस देत हैं औ नेवता दिए कि ज्यौं आजु जागरन भयो है अर्थात् श्री राम की छठी को तैसे काल्ह श्री भरतकी छठी को औ परों श्रीलक्ष्मण शत्रुहन की छठी को जागरन होहिंगे, अब गोसांई जी कहत हैं ते धन्य हैं औ पुन्य के समुद्र हैं जे तेहि समय में सुखपूर्वक जीवन तें जिए अर्थात् वहि उत्सव में जे रहे ॥५॥ संपाति कहैं लक्ष्मी औ सिद्धि अणिमादि ते स्त्री सखी को श्रेष्ठ वेष कारि कमाति हैं अर्थात् दासीपना कराति हैं औ अणिमादि सिद्धि औ सरस्वती औ पार्वती श्री बालराम कों लालत पालत हैं जन्म भरि में जे परितोष न पाए ते परितोष उमा रमा लहतु भईं अर्थात् पुत्र खेलायवे को सुख न पाए रहीं सो पाईं औ इंद्रादिक अपने लोक को भूले, जावे को को कहै घर की चरचा तक नहीं चलावत हैं। गोसांई जी कहत हैं मानो तीनौं ताप में तपत संसार प्रभुछठी की छाया पाई है ॥ ६॥५ ॥

राग जयतश्री—बाजत अवध गहागहे आनंद बधाये। नामकरन रघुबरनि के नृप सुदिन सोधाए। पाय रजायसु राय को रिषिराज बोलाए॥ सिष्य सचिव सेवक सखा सादर सिरनाए। साधु सुमति समरथ सबै सानंद सिधाए।

जल दल फल मनि मूलिका कुलि काज लिषाए ॥ १ ॥
गनप गौरि हर पूजिकै गोबिन्द दुहाए। घर घर मुद मंगल
महागुनगान सुहाए। तुरित मुदित जहं तहं चले मन के
भए भाए। सुरपति सासनु घन मनो मारुत मिलिधाए ॥२॥
गृह आंगन चौहट गली बाजार बनाए। कलस चमर तोरम
ध्वजा सुवितान तनाए ॥ चित्र चारु चौकै रची लिषि नाम
जनाए। भरि भरि सरवर बापिका अरगजा सनाए ॥ ३ ॥
नर नारिन्ह पल चारि मे सब साज सजाए। दशरथपुर छबि
आपनी सुरनगर लजाए ॥ बिबुध बिमान बनाइकै आनंदित
आए। हरषि सुमन बरषन लगे गये धनु जनु पाए ॥४॥ बरे
विप्र चहुं वेद के रविकुल गुर ज्ञानी। आपु वशिष्ट अथर्वनी
महिमा जग जानी ॥ लोकरीति विधिवेद की करि कह्यो
सुबानी। सिसु समेत बेगि बोलिये कौसल्या रानी ॥ ५ ॥
सुनत सुआसिनि लै चलीं गावत बडभागी। उमा रमा
सारद सची देषि सुनि अनुरागी। निज निज रुचि वेष
विरचिकै हिलि मिलि संग लागीं। तेहि अवसर तिहुंलोक
की सुदसा जनु जागीं ॥ ६ ॥ चारु चौक बैठत भईं भूप
भामिनि सोहैं ॥ गोद मोद मूरति लिये सुकृती जन जोहैं।
सुष सुषमा कौतुक कला देषि सुनि मुनि मोहैं। सो समाज
कहै बरनिकै ऐसो कबि कोहैं ॥ ७ ॥ लगे पढन रछारिचा
रिषिराज बिराजे। गगन सुमन झरि जय जये बहु बाजने
बाजे ॥ भए अमंगल लंक मे संक संकट गाजे। भुअन चारिदस
के बडे दुष दारिद भाजे ॥ ८ ॥ बाल बिलोकि अथर्वनी

हंसि हरहि जनायो। सुभ को सुभ मोद मोद को रामनाम सुनायो॥ आल बाल कल कोसिला दल बरन सुहायो। कंद सकल आनंद को जनु अंकुरि आयो॥ ९॥ जोहि जानि जपि जोरिकै करपुट सिर रावे। जय जय जय करुनानिधे सादर सुर भाषे॥ सत्यसंध सांचे सदा जे आषर आषे॥ प्रनतपाल पाये सही जे फल अभिलाषे॥ १०॥ भूमिदेव देव देषि कै नरदेव सुषारी। बोलि सचिव सेवक सषा पटधारि भंडारी॥ देहु जाहि जेहि चाहिए मन मानि संभारी। लगी देन हिय हरषिकै हेरि हेरि हंकारी॥ ११॥ राम नेवछावरि लेन को हठि होत भिषारी। बहुरि देत तेहि देषिये मानहु धनधारी॥ भरतलषनरिपुदमनहूं धरे नाम बिचारी। फल दायक फल चारि के दसरथ सुतचारी॥ १२॥ भये सुप बालकनि के नाम निरूपम नीके। गये सोच संकट मिटे तब तें पुरती के॥ सुफल मनोरथ बिधि किये सब बिधि सबही के। अब ह्वैहैं गाये सुने सब के तुलसी के॥ १३॥ ६॥

कवि की उक्ति। आनंद बधावा अवध में गहागह बाजत है। गहागह यह अनुकरण है चारो भाइन के नामकरण के हेतु। महाराज सुंदर दिन सोधावत भए। महाराज की आज्ञा पाय श्री बशिष्ट जू के शिष्य औ महाराज के मंत्री दास सखा बोलवावत भए ते आइ सादर शिर नवाए ते सब साधु समर्थ को बशिष्ट जू आनंद सहित सिखावत भए। भाव वस्तु आनै की बिधि समुद्रादि जल तुलसी दुर्वा बिल्वादि दल सोपारी आदि फल पंच रत्न आदि मणि सतावारि आदि जड़ी और जे संपूर्ण काज के वस्तु लिखाइ दिए॥ १॥ गनेश गौरी श्री शिव जी को पूजि कै गाइन को दुहाए। घर घर में महा आनंद मंगल औ गुन के गान सुंदर होत भए। मन के भाए भए ते सचिव सेवकादि जहां तहां तुरित हर्षित

चले मानो इंद्र की आज्ञा तें मेघ पवन मिलि करि धाए ।२। गृह आदि सुगम। विचित्र सुंदर चौकैं रचि कै नाम लिखि जनावत भए अर्थात् यह चौक श्री राम की है यह श्री भरतादि भैयन की है औ तलाव बावली में अरगजा भरि भरि के सनाए ॥ ३ ॥ एतना बड़ा काज सो चारि पल में नर नारि सब सजाए । दशरथपुर ने अपनी छबि तें इन्द्रलोक को लज्जित किए अतएव देवता विमान बनाय कें आनंदित आए । भाव लजीली पुरी में रहना उचित नहीं। हर्षि के फूल बरखन लगे, मानो गए धन पाए ॥४॥ वशिष्ट जी ने बरे कहैं नेवता दिए चारो वेद के ब्राह्मणों को औ आप वशिष्ट जो अथर्बनी हैं जाकी महिमा जगत जानत है सो लोकरीति औ बेद की विधि करि सुन्दर बानी ते कहे । सिसुइ० सु० ॥५॥ सुनत मात सुआसिनी बडिभागिनी गावत ले चली। पार्वती लक्ष्मी सरस्वती इन्द्रानी स्वरूप देखि गान सुनि कै अनुरागत भईं। अपनी २ रुचि अनुसार बेख बनाय हिलि मिलि संग लागत भईं तेहि अवसर में तीनों लोक की मानो सुंदर दशा जागी । भाव चौकठ के बाहर होते सुंदर दसा जागी तो जब घर के बाहर निकसैंगे तब क्या जानै क्या होयगो, बरही के दिन आगन में निकालवे की रीति है ॥ ६ ॥ सुंदर चौके में भूपभामिनी बैठत भई गोद में आनंद की मूर्ति लिए सोभत हैं जेहि मूर्ति को सुकृतीजन देखत हैं, सुख औ परम शोभा औ कौतुक की कला देखि सुनि के मुनि मोहत हैं । सो इ० सु० ॥७॥ विराजे शोभे संक संकट गाजे कहैं संका औ संकट गाजत भए ॥ ८ ॥ बालक को देखि अथर्वणी ने शिव को जनायो जो शुभ को शुभ मोद को मोद राम नाम है, सो हंसि के सुनायो माता पिता आदि को सुनायो, हंसने को यह भाव कि, इन का नित्य नावँ जो है, ताको अब धरत हौं । पाद्मे-"श्रियः कमलवासिन्याः रमणोऽयं यतो हरिः । तस्मात् श्रीराम इत्यस्य नाम सिद्धं पुरातनम् ॥ सहस्रनामसदृशं स्मरणान्मुक्तिदं नृणाम् ॥" वशिष्ट कों अथर्वनी रघुवंश में भी लिखा है। "अथाथर्वनिधेस्तस्य विजितारिपुरः पुरः । अर्घ्यामर्थपाति वाच माददे वदतां वरः ॥" अथर्वनी कहिवे ते, पुरोहित कृत्य के ज्ञाता जनाये, तथा च कामन्दके—"त्रय्यां च दण्डनीत्यां च कुशलः स्यात्पुरोहितः । अथर्वविहितं कुर्या नित्यं शांति-

कपौष्टिकम् ॥'' तीनों वेद में, औ राजनीति में, प्रवीन होय, सो पुरोहित अथर्वण वेद करि बिहित शांतिक पौष्टिक कर्म करै। थाल्हा रूप सुंदर श्री कौशल्या जू हैं, तिन में सकल आनंद को मूल, मानो अंकुर आयो है। इहां अंकुर के स्थान में बाल श्री राम हैं, अंकुर ते दुइ दल निकसत हैं, सो इहां राम नाम के सुंदर दोऊ अक्षर हैं ॥९॥ श्री रामजी को देखि के, औ वशिष्ट जी के कहिवे ते, नाम जानि के ताको जपि कै हस्तपुट जोरि सिर पर राखे, अर्थात् प्रणाम किए, हे करुणानिधे, हे सत्यसंध, हे प्रणतपाल, आप की जय होय जय होय, आदर सहित देवता भाषे, आप जे आपर आषे कहैं, कहे अर्थात् ''जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा। तुमहि लागि धरिहौं नरवेसा ॥'' इत्यादि ते सदा सांचे, जे फल अभिलाषे रहे ते ठीक पाए, अर्थात् आप के अवतार के अभिलाषे रहे सो पाए ॥१०॥ ब्राह्मण औ देवतन को देखि कै सुखी जोनरदेव सो संचित्र सेवक सखापटधारी बस्त्रन के अधिकारी, औ भंडारी अन्नादिक के अधिकारी बोलाय के आज्ञा दिए ॥ ११ ॥ धनधारी कुबेर ॥ १२ ॥ भूप के बालकन के उपमा राहित नीके नाम भए, तब ते पुरतियन के सोच गये, औ संकट मिटे, भाव सूतिकागृह में अनेक विघ्न को भय रहत है, औ स्त्रियन को भीरु सुभाव भी होत है, ताते डरी रहीं सो बरही कुशलपूर्वक समाप्ति भई, ताते सोच गयो, वा शुभ को शुभ मोद को मोद राम नाम सुनि सोच राहित भई ॥ १३ ॥ ६ ॥

राग बिलावल—सुभग सेज सोहति कौसल्या रुचिर राम सिसु गोद लिये। बार बार बिधु बदन बिलोकति लोचन चारु चकोर किये ॥ १ ॥ कबहुं पौढि पय पान करावति कबहुं राषति लाय हिये। बालकेलि गावति हलरावति पुलकित प्रेम पियूष पिये ॥ २ ॥ बिधि महेस मुनि सुर सिहात सब देषत अंबुद ओट दिये। तुलसिदास ऐसो सुष रघुपति पै काहू तो पायो न बिये ॥ ३ ॥ ७ ॥

कवि की उक्ति। बिधु चंद्र ॥१॥ श्री राम प्रेम रूप अमृत को पिए,

जो श्री कौशल्या जू से बाललीला के पद गावति, औ श्री रघुनाथ को हाथ पर झुलावति, औ रोमांचित होति हैं, भाव हर्ष तें ॥ २ ॥ कदर के ओट देइ देखिवे को यह भाव कि, प्रत्यक्ष होय देखिवे से माता हम लोगों के ओर दृष्टि करैंगी, तो यह सुख जात रहैगो, ऐसो सुख रघुपति सें बिये कहैं, दूसरे ने न पायो ॥ ३ ॥ ७ ॥

राग सोरठ —ह्वैहो लाल कबहिं बडे बलि मैया । राम लषन भावती भरत रिपुदवन चारु चारयो भैया ॥ १ ॥ बाल विभूषन बसन मनोहर अंगनि बिरचि बनैहौं । सोभा निरषि निछावरि करि उरलाय वारने जैहौं ॥२॥ छगन मगन अगना षेलिहौ मिलि ठुमुकि ठुमुकि कब धैहौं । कलबल बचन तोतरे मंजुल कहि मा मोहि बुलैहौं ॥ ३ ॥ पुरजन सचिव राउ रानी सब सेवक सषा सहेली ॥ लैहै लोचनलाहु सुफल लषि ललित मनोरथ बेली ॥ ४ ॥ जो सुष की लालसा लटू सिव सुक सनकादि उदासी। तुलसी तेहि सुष सिन्धु कौसिला मगन पै प्रेम पियासी ॥ ५ ॥ ८ ॥

मैया बलिजाय, हे लाल, कब बड़े है हौ। भाषेत कहैं सोहाते ॥१॥ बाल विभूषन कठुला जामें बजर बट्ट बघनहा आदि रहत है, औरो पदिक हारादि अनेक, औ बसन झिंगुलिया चौतनी आदि यम के हरैया अंगन में बिरचि के बनावोंगी, वा अंगनि को भी विशेष रचि बनै हौं भाव चोटी गांठि उबटि डिठौना आदि दै शोभा देखि नेवछावर करि उरलाय फिरि आपै नेवछावरि होय जैहौं ॥ २ ॥ छगनमगन एक खेल विशेष है, कल बल जो बुद्धि के बहुत कला औ बल से बुझाय तोतरे आधे और के और कहे सोई स्पष्ट करत हैं, कहि मा मोहि बुलै हो अर्थात् माय स्पष्ट न कहि मा कहि बोलैहौ ॥ ३ ॥ पुरजन सचिव आदि सुंदर मनोरथ रूप लता में सुंदर फल देखि लोचन लाहु लेइ हैं, इहां सचिव पद से आठो मंत्री जानना, बाल्मीकीये—

" धृष्टि र्जयंतो विजयः सुराष्ट्रो राष्ट्रवर्द्धनः । अशोको धर्मपालश्च सुमंत्रश्चाष्टमो महान्" ॥४॥ लालसा मे लट्टू हैं, भाव जैसे एकै ठांव घूमत झूमत लटू अचल रहत ॥ ५ ॥ ८ ॥

पगनि कब चलिहौ चारो भैआ । प्रेम पुलकि उर लाइ सुअन सब कहत सुमित्रा मैआ ॥ १ ॥ सुंदरतन सिसु बसन बिभूषन नष सिष निरषि निकैआ । दलितृिन प्रान नेछावरि करि करि लैहै मातु बलैआ ॥ २ ॥ किलकनि नटनि चलनि चितवनि भजि मिलनि मनोहर तैआ । मनिषंभनि प्रतिबिंब भलकछवि छलकिहि भरि अंगनैआ ॥ ३ ॥ बाल बिनोद मोद मंजुल बिधु लीला ललित जुन्हैया । भूपति पुन्य पयोधि उमगि घर घर आनंद बधैया ॥ ४ ॥ ह्वै हैं सकल सुकृत सुष भाजन लोचन लाहु लुटैआ । अनायास पाइ हैं जनम-फल तोतरे बचन सुनैआ ॥५॥ भरत राम रिपुदमन लषन के चरित सरित अन्हवैआ । तुलसी तब के से अजहुं जानिवे रघुवर नगर बसैआ ॥ ६ ॥ ९ ॥

निकैया सुंदराई । तृन तोरिवे को यह भाव कि अपनो नजर न लगै ॥२॥ नटनि नाचनि भजि मिलनि भागि के मिलना मणिखंभनि में जो प्रतिबिंब परैंगे तिन की छवि की झलक भरि अंगनाई छलकिहि, भाव प्रतिबिंब का प्रतिबिंब भरि अंगनाई परिहि वा अवहीं जो घर में रहिवे ते मणि खंभनि में प्रतिबिंब के झलक की छवि है, सो जब वाहर खेलिहैं, तव भरि अंगनाई झलकहि, भाव आंगन भरि बालकै बालक देखि परैंगे ॥ ३ ॥ चारो भैयन के लरिकखेल जो आनंद, सो चन्द्रमा औ सुंदर खेलना जो है, सो तेहि चंद की चांदनी, तेहि चन्द प्रकाश युक्त को देखि कै पुण्य के समुद्र जे भूपाति ते उमगिहैं, जब समुद्र उमगत है, तब शब्द करत है, इहां घर घर में आनंद ते जो वधाई

होना है, सो शब्द है ॥ ४ ॥ तोतरे वचन के सुननहारे बेपरिश्रम जन्म के फल को पावैंगे, भाव वेद वेदांत के श्रवण मनन निदिध्यासन बिना जन्म को फल अर्थात् मोक्ष पावैंगे, इहां माधुर्यपक्ष मे स्पष्ट है ॥ ५ ॥ श्री गोसांई जी कहत हैं, भरत राम रिपुदवन लषन के चरित्र रूपी नदी के स्नान करैया जे हैं तिन को तव के सरिस अबो रघुबरनगर बसैया जानना ॥ ६ ॥ ६ ॥

राग केदार—चुपरि उबटि अन्हवाय कै नयन आंजिरचि रुचि तिलक गोरोचन को कियो है। भू पर अनूप मसिबिंदु बारे बारे वार बिलसत सीसपर हेरिहरै हियो है ॥१॥ मोद भरि गोदलिये लालति सुमित्रा देषि देव कहैं सबको सुकृत उपबियो है। मातु पितु प्रिय परिजन पुरजन धन्य पुन्यपुंज पेषि पेषि प्रेम रसपियो है ॥ २ ॥ लोहित ललित लघु चरन कर कमल चाल चाहि सो छबि सुकवि जियजियो है। बाल केलि बातबस झलकि झलमलत सोभा की दीयटि मानो रूपदीप दियो है ॥ ३ ॥ राम सिसु सानुज चरित चारु गाय सुनि सुजननि सादर जनमलाहु लियो है। तुलसी बिहाइ दसरथ दसचारिपुर ऐसे सुष योग बिधि बिरच्यो न बियो है ॥ ४ ॥ १० ॥

उबटन लगाय तेल चुपरि नहवाय के नेत्र में काजर दिये औ रुचि पूर्वक रचि कै गोरोचन को तिलक कियो औ भौंह पर उपमा रहित स्याम बिंदु दियो, अर्थात् डिठौना औ छोटे छोटे बार सिर पर शोभित हैं, देखे से हृदय हरि लेत हैं ॥ १ ॥ आनंद में भरि कै गोद में लिये सुमित्रा जू को दुलारत देखि देवता कहत हैं, कि सब को सुकृत उदै भयो है, औ माता पिता प्रिय परिवार के जन औ पुरजन धन्य औ पुन्य के पुंज हैं, काहे ते कि देखि देखि के प्रेम रस को पी लियो है ॥२॥ सुंदर लाल छोटे २ चरन औ कर कमल का चाल कहैं चलावना जो

सो छबि देखि कै सुंदर कवि को जीव जी उठ्यौ है, इहां चाल शब्द ते हाथ पैर का चलावनां लेना क्यौंकि बंकंइआं चलना अबहीं आगे कहैंगे मानो सोभा रूप दीवट पर रूप रूपी दीया धरयौ है सो बाल केलि रूप बायु के बस झलकि के झलमलात है ॥ ३ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि चौदहो भुअन में ऐसे सुख के योग्य महाराज दशरथ को छोडि के ब्रह्मा ने दूसरे को नहीं बनायो है ॥ ४ ॥ १० ॥

राम सिसु गोद महामोद भरे दशरथ कौसिलहु ललकि लषन लाल लिये हैं । भरत सुमित्रा लये कैकई सत्रुसमन तन प्रेम पुलकि मगन मन भये हैं ॥ १ ॥ मेढी लटकन मनि कनक रचित बाल भूषन बनाइ आछे अंग अंग ठये हैं। चाहि चुचुकारि चूंबि लालत लावत उर तैसे फल पावत जैसे सुबीज बये हैं ॥ २ ॥ घन ओट बिबुध बिलोकि बरषत फूल अनुकूल बचन कहत नेह नये हैं। ऐसे पितु मातु पूत पुर परिजन बिधि जानियत आयुभरि एई निरमये हैं ॥ ३ ॥ अजर अमर होहु करो हरि हर छोहु जरठ जठेरिन्हि आसिर्बाद दिये हैं । तुलसी सराहै भाग तिन्ह के जिन्ह हिये डिंभ राम रूप अनुराग रंग रये हैं ॥ ४ ॥ ११ ॥

बालराम गोद में हैं, ताते दशरथ महाराज महामोद में भरे हैं औ श्री कौशल्या जू भी ललकि कै लषन लाल को लिये हैं, भरत जू को श्री सुमित्रा जू औ शत्रुहन जू को कैकई जू लिये हैं, प्रेम तें तन पुलकि करि कै सब के मन मगन भये हैं ॥ १ ॥ भालपर के बाल कों चोटी सरिस दूनो ओर से गूंथि के पीछे के ओर ले जात हैं, ताको मेढी कहत हैं, तामे लटकने लटकत हैं, और मणि सोना ते रचित, अर्थात् जड़ाऊ बाल समयके भूषन आछे बनाय कै अंग अंग में ठाने हैं, अर्थात् पहिराये हैं, देखि चुचुकारि चूमि कै दुलारत, औ हृदय में लगावत हैं तैसे फल पावत जैसे सुंदर बीज बोए हैं, इहां सुंदर बीज सुंदर कर्म

हैं ॥ २ ॥ मेघ के ओट ते देवता देखि कै फूल वर्षत हैं औ नये नेह से अनुकूल बचन कहत हैं वा नेह से देव नम्र है गए हैं वा अनुकूल बचन कहत हैं कि इन के नेह नवीन हैं अर्थात् अस न देखे। पिता माता नगर परिचय को जानियत हैं कि विधाता आयुष भरि में ऐसे इनहीं को बनाए हैं ॥ ३ ॥ जरठ जठेरिन्ह बूढ़ औ बूढ़िया डिंभ बालक रये रंगे ॥ ४ ॥ ११ ॥

राग असावरी—आजु अनरसे हैं भोर के पय पियत न नीके। रहत न बैठे ठाढ़े पालने झूलतहु रोअत राम मेरो सो सोचु सबही के ॥ १ ॥ देव पितर ग्रह पूजिअे तुला तौलिअे घी के । तदपि कबहु कबहु के सषी ऐसही अरत जब परत दृष्ट दुष्ट ती के ॥ २ ॥ बेगि बोलि कुलगुरु छुअे माथे हाथ अमीके। सुनत आइ रिषि कुसहरे नरसिंहमंत्र पढ़ि जो सुमिरत भय भी के ॥ ३ ॥ जासु नाम सर्वस सदा सिव पारवती के। ताहि झरावति कौसिला यह रीति प्रीति की हिय हुलसति तुलसी के ॥ ४ ॥ १२ ॥

अनरसे हैं खनमनाए हैं ॥ १ ॥ घृत को तुला दान सुख कारक रोगहारकहै, अरत छैलात ॥ २ ॥ शीघ्र बोलाइये कुलगुरु को कि वृथ को अमृत रूप हाथ ते छुअैं सुनत मात्र में ऋषि आय कै नरसिंह सिंघ्य सुमिरत भय को भय होत सो पढ़ि कै कुशहरे कुश ते मार्जन ॥ १२ ॥

माथे हाथ जब दियो रिषि राम किलकन लागे। महिमा समुझि लीला बिलोकि गुरु सजल नयन तन पुलकि रोम रोम जागे ॥१॥ लिये गोद धाए गोद ते मोद मुनि मन अनुरागे। निरषि मातु हरषीं हिये आली ओट कहति मृदु-बचन प्रेम कैसे पागे ॥ २ ॥ तुम सुरतरु रघुवंस के देत अभि-

मत मागे। मेरे बिसेषगति रावरी तुलसी प्रसाद जाके सकल अमंगल भागे ॥ ३ ॥ १३ ॥

माता के गोद तें धाए तब मुनि गोद में लिए औ हर्ष ते मुनि मन में अनुरागे ॥ २ ॥ सुरतरु कल्पवृक्ष, अभिमत बांछित फल ॥ ३ ॥ १३ ॥

अमिय बिलोकनि करि कृपा मुनिवर जब जोए। तब ते राम अरु भरत लषन रिपुदमन सुमुषि सषि सकल सुअन सुषसोये ॥ १ ॥ लाय सुमित्रा लिए हिए फनिमनि ज्यों गोए। तुलसी नेवछावरि करति मातु अतिप्रेममगन मन सजल सुलोचनकोए ॥ २ ॥ १४ ॥

अमिय बिलोकनि अमृत दृष्टि जोए देखे ॥ १ ॥ सुमित्रा जू हृदय में लगाय लिए जैसे सर्प मणि को छपावत कोय कहैं कोर ॥ २ ॥१४॥

मातु सकल कुलगुरुबधू प्रियसषी सुहाई। सादर सब मंगल किए महि मनि महेस पर सबनि सुधेनु दुहाई ॥१ ॥ बोलि भूपभूसुर लिये अति बिनय बडाई। पूजि पांय सनमानि दानदिये लहि असीस मुनि बरषैं सुमन सुरसांई ॥ २ ॥ घरघर पुर बाजन लगे आनंदबधाई। सुष सनेह तेहि [illegible] को तुलसी जानै जाको चोरी है चित चहुंभाई ॥ ३ [illegible] को

सकल माता कुलगुरु बधू अरुंधती औ सुंदर प्रिय सखी आदर सहित मंगल किए। भूमि में जो मणि कहैं श्रेष्ठ महेश तिन पैं वा माहिम्न स्तोत्र ते सबनि ने सुंदर धेनु दुहाई। अयोध्या खंड में क्षीरेश्वर महादेव पर दूधदुहावना लिखा है ॥ १ ॥ ब्राह्मणों को महाराज बोलाय लिए अति बिनय बड़ाई ते पाय पूजि सनमानिकै दान दिए तब आसीस पाय सो सुनि कै देवतन के स्वामी फूल बर्षत भए ॥ २ ॥ ३ ॥१५॥

राग धनाश्री—या सिसु के गुन नाम बडाई। कोकहि सकै सुनहु नरपति श्रीपतिसमान प्रभुताई ॥ १ ॥ यद्यपि बुधि बय रूप शील गुन समै चारु चार्यौ भाई। तदपि लोक लोचन चकोर ससि राम भगत सुषदाई ॥२॥ सुर नर मुनि करि अभय दनुजहति हरिहि धरनि गरुआई। कीरति बिमल बिश्वअघ मोचनि रहिहि सकल जगछाई ॥ ३ ॥ या के चरन सरोज कपटतजि जो भजिहै मनलाई। सो कुल जुगुल-सहित तरि है भव एह न कछू अधिकाई ॥४॥ सुनि गुरुबचन पुलकितन दंपति हरष न हृदय समाई। तुलसिदास अव-लोकि मातुमुष प्रभुमन में मुसुकाई ॥ ५ ॥ १६ ॥

समै बराबर ॥ ५ ॥ १६ ॥

टिप्पणी—राक्षसों को मार कर सुर नर मुनि को अभय करेंगे। और पृथ्वी की गरुआई कहें बोझ उतारेंगे, सो अघ पाप को हरनेवाली विमल कीर्ति संसार में छाये रहेगी ॥ १६ ॥

राग बिलावल—अवध आजु आगमी एकु आयो। कर-तल निरषि कहत सबगुनगन बहुतनि परिचो पायो ॥ १ ॥ बूढो बडो प्रमानिक ब्राह्मण संकर नाम सुहायो। संग सिसु सिष्य सुनत कौसिल्या भीतर भवन बुलायो ॥ १ ॥ पाय-पषारि पूजि दयो आसन असन बसन पहिरायो। मेले चरन चारु चारों सुत माथे हाथ दिवायो ॥३॥ नषसिष बाल बिलोकि बिप्र तनु पुलक नयन जल छायो। लैलै गोद कमल कर नि-रषत उरप्रमोद अनमायो ॥ ४ ॥ जन्म प्रसंग कह्यो कौसिक मिसि सीयस्वयंबर गायो। राम भरत रिपुदमन लषन को जय सुष सुजन सुनायो ॥ ५ ॥ तुलसिदास रनिवास रहसबस

भयो सब को मन भायो । सनमान्यौ महिदेव असीसत सा-
नंद सदन सिधायो ॥ ६ ॥ १७ ॥

शिव जी जोतषी बनि कै संग में सुंदर शिष्य काग भशुंड जी के बनाय कै इष्ट दर्शन हेतु आए हैं । उर प्रमोद अनमायो हृदय में आनंद नहीं अमात है ॥ १७ ॥

टिप्पणी—आगम जानने वाले को आगमी अर्थात् ज्योतषी कहते हैं । करतल तलहथी । परिचो परिचय अर्थात् शिवरूपी ज्योतिषी जी ने जिन २ को जैसा फल कहा सो सच देख पड़ा । शिव जी बार बार राम जी को गोद में ले कर कमल समान कर देख देख कर इतने प्रसन्न हुए कि हृदय में आनन्द नहीं अंटा अर्थात् आनन्द हृदय से उमड़ गया ॥ १७ ॥

राग केदार—पौढ़िये लाल पालने हौं झुलावौं । कर पद मुख चख कमल लसत लखि लोचन भंवर भुलावौं ॥ १ ॥ बालबिनोद मोद मंजुल मनि किलकनि खानि खुलावौं । तेइ अनुराग ताग गुहिवे कहुं मति मृगनयनि बुलावौं ॥२॥ तुलसी भनित भली भामिनि उर सो पहिराइ फुलावौं । चारु चरित रघुवर तेरे तेहि मिलि गाइ चरन चित लावौं ॥ ३ ॥१८॥

हे लाल पालने पौढ़िए हम झुलावैं । कर पद मुख नेत्र रूप कमल शोभित देखि कै अपने नेत्र रूप भ्रमर को भुलावैं ॥ १ ॥ बालक्रीड़ा को आनंद सोई सुन्दर मणि हैं । मणि खानि ते निकसत है सो कहत हैं कि किलकानि रूपी खानि से खुलावौं अर्थात् प्रगटावौं तेहि मणि को अनुराग रूपी धागा में गुहिवे को मति रूपी मृगनैनी अर्थात् पटहारिन को बुलाय लेउं ॥ २ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि भनित भली रूपी भामिनी के उर में सो मणि का हार पहिराय के फुलावौं अर्थात् आनंदित करौं । हे रघुवर तेरे सुन्दर चरित्र को तेहि भनित रूपी भामिनी के संग मिलि गाइकै चरण में चित्त लगावौं ॥ ३ ॥ १८ ॥

सोइए लाल लाडिलेरघुराई । मगनमोद लिए गोद-सुमित्रा बारबार बलिजाई ॥१॥ हँसे हँसत अनरसे अनरसत प्रतिबिंबनि ज्यौं झाई । तुम्ह सब के जीवन के जीवन सकल सुमंगलदाई ॥ २ ॥ मूलमूल सुरबीथि बेलि तमतोम सुदल अधिकाई । नषत सुमन नभ बिटप बोंडि मानो छपा छिटकि छबिछाई ॥ ३ ॥ हौ जभांत अलसात तात तेरी बानि जानि मै पाई । गाइ गाइ हलराइ बोलिहौं सुषनींदरी सुहाई ॥४॥ बाछरू छबीले छौना छगन मगन मेरे कहति मल्हाइ मल्हाई । सानुजहिय हुलसति तुलसी के प्रभु कि ललित लरिकाई ।५।१९

हंसिबे ते हंसत हैं औ उदास होवे ते उदास होत है बिंबनि प्रति जैसे परिछाहीं। तुम सब के जीवन के जीवन औ सब सुमंगल देनिहार हौ ॥ २ ॥ मूल मूल नक्षत्र है सुरबीथी लता है औ तमसमूह सुंदर दलों की अधिकाई हैं औ नक्षत्र कहैं तारागण फूल हैं सो आकाश रूप वृक्ष पर छिटकि औ बोंड़ि कहैं फैलि कै मानो रीति छबि छाई है। मूल लिखिबे को यह भाव कि जड़ में एक मुसरा रहत है तामें महीन महीन बहुत सोर रहत है। मूल नक्षत्र के ग्यारह तारे हैं तेहि में से एक मुसरा के स्थान है औ दस महीन महीन सोरों के हैं ॥ ३ ॥ हे तात अलसात जम्हात हौ, तुम्हारी बान हम जान पाई, भाव जब अस करत हौ तब सोअत हौं हाथ पैर हिलाय गाय गाय सुखनिंदिया को बोलैहौं ॥ ४ ॥ मलहाई मलहाई रगिआय रगिआय ॥ ५ ॥ १९ ॥

ललनलोने लैरुआ बलि मैया । सुष सोइअै नीदबेरिआ भइ चारु चरित चार्‌यौ भइआ ॥ १ ॥ कहति मल्हाइ लाइ उर छनछन छगन छबीले छोटे छैया । मोदकंद कुलकुमुदचंद मेरे रामचंद्र रघुरैआ ॥ २ ॥ रघुबरबाल केलि संतन की सुभग सुभद सुरगैआ । तुलसी दुहि पीवत सुषजीवत पयसुपेमघनोघैया ॥ ३ ॥ २० ॥

लेरुआ बछरा चारु चरित सुंदर हैं चरित्र जेहि के ॥ १ ॥ छैया बालक मोद कंद आनंद के मूल औ कुल रूप कुमुद के चंद्रमा ॥ २ ॥ रघुवर की बालकेलि संतन की सुंदर शुभ देनिहारी कामधेनु है। तेहि कामधेनु ते सुंदर प्रेम रूप दूध जामे घना घीव है ताको तुलसी दुहि कै पीवत है ताते सुखयुत जीवत है ॥ ३ ॥ २० ॥

सुषनींद कहति आलि आइहौं। रामलषन रिपुदमन भरत सिसु करि सबसुमुष सोआइहौं ॥ १ ॥ रोवनि धोवनि अनषानि अनरसनि डीठि मूठि निठुर नसाइहौं। हंसनि षेलनि किलकनि आनंदनि भूपतिभवन बसाइहौं ॥२॥ गोद बिनोद मोदमय मूरति हरषि हरषि हलराइहौं। तनु तिल तिलकरि वारि राम पर लैहौं रोगबलाइ हौं ॥ ३॥ रानी राउ सहित सुत परिजन निरषि नयनफल पाइहौं। चारु चरित रघुवंसतिलक की तहं तुलसिहि मिलि गाइहौं ॥ ४ ॥२१॥

अब माता फुसिलावति हैं कि सुखनींद कहति है कि हे आली मैं आइ हौं, सुमुख प्रसन्न ॥ १ ॥ रोअनि धोआनि रूढि है रोइबे के अर्थ में अनखानि खनमनानि, अनरसनि उदासीनता, दीठि नजर, मूठि टोना ताको निठुरता ते नसाओंगी। भाव दया न करोंगी वा ए सब जो निठुर तिन्ह को नसाओंगी भूपति भवन बसाइवे को यह भाव कि जब बालक सुखपूर्वक सोअत है तब उठे पर आनंदपूर्वक खेलत है ॥ २ ॥ क्रीड़ा औ आनंदमय मूरति को गोद में लै कै हरखि हरखि के हलराओंगी तन को तिल तिल करि कै श्री राम पर नेवछावरि करि रोग बलाय हम लै हौं ॥ ३ ॥ रानी राजा को पुत्र परिवार समेत देखि कै नैननि को फल पाओंगी सुंदर चरित रघुवंशतिलक के तहां तुलसी के संग मिलि गाओंगी ॥ ४ ॥ २१ ॥

राग असावरी—कनक रतनमय पालनो रच्यो मनहु मारसुतहार। बिबिध षेलौना किंकिनी लागे मंजुल मुकाहार।

रघुकुल मंडन रामलला ॥ १ ॥ जननी उबटि अन्हवाइकै मनिभूषन सजि लिये गोद । पौढ़ाये पटुपालने सिसु निरषि मगन मनमोद ॥ दसरथनंदन रामलला ॥ २ ॥ मदनमोर की चंद्रिका झलकनि निदरति तनजोति । नील कमल मनि जलद की उपमा कहे लघुमति होति ॥ मातु सुकृतफल रामलला ॥ ३ ॥ लघु लघु लोहित ललित है पद पानि अधर एकरंग । को कबि जो छबि कहि सकै नषसिष सुन्दर सब अंग ॥ परिजनरंजन रामलला ॥ ४ ॥ पगनूपुर कटि किंकिनी करकंजन पहुंची मंजु । हिय हरिनष अद्भुत बन्यो मानो मनसिज मनिगनगंजु । पुरजनसुरमनि रामलला ॥५॥ लोयन नीलसरोज से भूपर मसिबिंदु बिराज । जनु बिधुमुषछबि अमिय को रच्छक राख्यो रसराज ॥ सोभासागर रामलला ॥ ६ ॥ गभुआरी अलकावली लसै लटकन ललित ललाट । जनु उड़गन बिधु मिलन को चले तम बिदारि करि बाट ॥ सहजसुहावन रामलला ॥७॥ देषि षेलवना किलकहिं पद पानि बिलोचन लोल । विचित्र बिहँग अलि जलज ज्यों सुषमासर करत कलोल ॥ भक्तकल्पतरु रामलला ॥८॥ बाल बोलि बिनु अरथ के सुनि देत पदारथ चारि । जनु इन बचनन्हि ते भये सुरतरु तापस त्रिपुरारि ॥ नाम कामधुक रामलला ॥ ९ ॥ सखी सुमित्रा वारहीं मनिभूषन बसन बिभाग । मधुर झुलाइ मल्हावई गावै उमगि उमगि अनुराग । हैं जग मंगल रामलला ॥ १० ॥ मोती जायो सीप में अरु अदिति जन्यो जग भानु । रघुपति जायो कौसिला गुन मंगल रूप निधानु । भुअनबिभूषन रामलला ॥११॥ राम

प्रगट जब ते भये गये सकल अमंगल मूल। मीत मुदित हित उदित हैं नित बैरिनि के उर सूल॥ भवभयभंजन रामलला ॥१२॥ अनुज सखा सिसु संग ले खेलन जैहैं चौगान। लंका खरभर परैगो सुरपुर बाजिहै निसान॥ रिपु-गनगंजन रामलला ॥१३॥ राम अहेरे चलेंगे जब गज रथ बाजि संवारि। दसकंधर उर धकधकी जनि धावै धनु-धारि॥ अरि करि केहरि रामलला ॥१४॥ गीत सुमित्रा सखिन के सुनि सुनि सुर मुनि अनुकूल। दै असीस जैजै कहि हरषैं बरषैं फूल॥ सुर सुखदायक रामलला ॥१५॥ बालचरित मय चंद्रमा यह सोरह कला निधान। चित चकोर तुलसी कियो करै प्रेम अमिय रसपान॥ तुलसी को जीवन रामलला ॥ १६ ॥ २२ ॥

श्री सुमित्रा जू औ सखिन की उक्ति है। रघुकुलमंडन रामलला जे हैं तिन्ह को मानो काम रूप बढ़ई कनक रतन में पालना रचत भयो तामें बहुत रंग के खेलवना औ घुंघुरू औ सुंदर मोतिन की माला लगे हैं॥ १॥ दसरथनंदन रामलला को माता ने उबटि अन्हवाइ के मणिन के गहना सजि के गोद लिये फेर सुंदर पालना में पौढ़ाए। बालक को देखि कै मन आनंद में मगन भयो॥ २॥ मातुसुकृतफल रामलला के तन की जोति काम के मोर की वा काम रूप मोर की चंद्रिका के झलकानि को निरादर करति है। नील कमल औ नील मणि औ नील मेघ की उपमा कहे तुच्छ मति होति है॥ ३॥ परिजनरंजन रामलला के छोटे२ पद हाथ ओठ एक रंग सुंदर लाल हैं। नख सिख सुंदर सब अंग की जो छवि सो कवन कवि कहि सकै॥ ४॥ परिजन के चिंतामणि रूप रामलला के पग में घुंघुरू कमर में किंकिनी औ हस्त कमलन में सुंदर पहुंची औ हृदय में बघनहा आश्चार्य बना है मानो ए सब भूषण काम के मणि समूहों को निरादर करनिहारे हैं॥५॥ सोभा-

र रामलला के नेत्र नील कमल सम हैं औ भौंह पर काजर बिंदु सोभत है सो मानो काजर को बिंदु नहीं है शृंगार रस है को मुख चंद्र के छबि रूप अमृत को रक्षक राख्यो है ॥ ६ ॥ सहज हावन रामलला के गभुवारी अलकावली औ सुंदर लटकन ललाट लसत है मानो चंद्रमा के मिलन को तारागन तम बिदारि राह करि ले । इहां लटकन उडगन हैं मुख शशि है तम अलकावली है दूनो तरफ ल अलगाए ते जो लकीर है गई है सो राह है ॥ ७ ॥ भक्तकल्पतरु म लला जो हैं सो खेलवना देखि कै किलकत हैं पग हाथ नेत्र चंचल मानो विचित्र पक्षी भ्रमर औ कमल परम सोभा रूप सर में कलोल रत हैं इहां विचित्र बिहंग बालकन के पग में महावरादि से चिरई खी जाति है सो है नेत्र भ्रमर कर कमल है ज्यौं का मानो अर्थ किया ो भी होत है । कुवलयानंदे "मन्ये शंके ध्रुवंमायोनूनमित्येवमादिभिः । क्षा व्यज्यते शब्दैरिवशब्दोऽपितादृशः ॥" ज्यौंइवपर्याय है ॥८॥ नाम धेनु है जेहि के तेहि रामलला के बिनु अर्थ के बालबचन जो सो सुने चारो पदार्थ देत है भाव आप तो बे अर्थ को हैं औ सब अर्थ देत वा बाल बोल बिनु अर्थ को जो है ताको सुनि कै सुनैया चारो फल इवे को समर्थ होत है मानो इन बचनन ते भए हैं कल्पवृक्ष औ तपस्वी औ शिव जी भाव देखिवे में बेअर्थ के एऊ हैं पर सब अर्थ देत हैं सो क्यौं न होहिं कारण को गुन कार्य में रहतही है ॥ ९ ॥ जगमंगल जो रामलला हैं तिन को सखी औ सुमित्रा जू मणिभूषण बसन पृथक २ नेवछावर करत हैं धीरे २ झुलाय अनुराग ते उमगि २ रगिआय गावत हैं ॥ १० ॥ मोती सीप में जन्म्यो औ जगत में अदिति ने भानु को जन्मायो औ गुन मंगल मोद के पात्र रघुकुल के पति औ भुवन के विशेष भूषण करनेवाले रामलला को कौशल्या जू उत्पन्न किये ॥११॥

राम प्रगट जब ते भए तब ते सब अमंगल के मूल गए मित्र आनं- औ हित कहैं नातेदार उदय के प्राप्त भए हैं और बैरिन के उर त ही शूल है सो क्यों न होय भव भय के भंजनिहार रामलला १२ ॥ रिपुगनगंजन रामलला जो हैं सो अनुज सखा सिसु लै के जब चौगान खेलन जैहैं जद्यपि जेहि डंडा से गेंदा खेला

जात है ताको चौगान कहत हैं पर इस खेल का भी नाम चौगा
लंका में खरभर औ सुरपुर में नगारा बाजिबे को यह भाव कि ब
काल में इतनी फुरती है तो आगे क्या जानें कैसी होयगी ॥१३॥
श्रीराम हाथी रथ घोड़ा संवारि सिकार को चलैंगे तब दशकंधर
उर में धकधकी होयगी कि अब इहां भी धनुधारन करि के जनि द
सो क्यों न होय, अरि रूपी हाथी के सिंह रामलला हैं ॥१४॥ सुमि
औ सखिन के गीत अनुकूल सुर मुनि सुनि के असीस देइ जय ज
कहत हर्षत हैं औ फूल बर्षत हैं सो क्यों न सुखी होंहिं सुरन के सुख
दायक रामलला हैं। अनुकूल गीत को यह भाव कि जस चाहत रहे त
गीतो में सुनत हैं ॥१५॥ तुलसीजीवन रामलला जो हैं सो यह षोड़श
कलानिधान बालचरितमय चंद्रमा है वा तुलसी के जीवन जे रामल
हैं तिन के षोड़शकलानिधान बालचरित्रमय जो यह चंद्रमा है ता
तुलसी अपने चित्त को चकोर कियो सो प्रेम रूपी जो अमृत
ताको पान करत है। चंद्रमा के षोड़श कला अमृतादि है तेहि के अ
सार रघुकुलमंडनादि षोड़श विशेषण किए। चंद्रकला यथा-"अमृतामा
नदांतुष्टिंपुष्टिंप्रीतिंरतिंतथा । लज्जांश्रियंस्वधांरात्रिंज्योत्स्नांहंसवतींततः
छायांचपूरणींवामाममांचंद्रकलाइमाः । स्वबीजाद्यानमेताश्च क्रमात्संपूज
येत्सुधीः ॥१॥" शारदातिलकादि तंत्र में शंखस्थापनप्रकरण में प्रसिद्ध है
रघुकुलमंडन रामलला को अमृत कला कहिबे को यह भाव कि बंश बिना
मृतक सरीर सम जो रघुकुल भया रहा ताको जिआय लिए। दशरथ-
नंदन को मानदा कला कहिबे को यह भाव कि जो जगत के कारण
सो पुत्र भए एहि ते अधिक कवन सन्मान देहिंगे। महिमा अवधि
राम पितु माता। औ। विधि हरिहर सुरपति दिसिनाथा। बरनहिं सब
दसरथ गुनगाथा ॥ मातुसुकृतफल रामलला को तुष्टिकला कहिबे
को यह भाव कि अपने सुकृत को फल पाए तोष होत है सो सुकृत प
रघुनाथ को पाय संतुष्ट भई । "आनंद अवनिराजरवनी सब मा
कोष जुडानी"। परिजन रंजन को पुष्टिकला कहिबे को यह भाव
परिवार के जन को पोषण करि रंजित किए कछुक काल बीते
भाई बड़े भए परिजन सुखदाई। पुरजन सुखमणि रामलला को प्री

बाल सुभाव ते जब कर तें गहि कैं मुख के निकट पल्लव इव अर्थात् पल्लवसमकोमल औ लाल पद को ले आवत भए तब अस सोहत मनो सुंदर दुइ सर्प सचुपाय कहै आनंदित चंद्रमा से कमल से भरि के सुधा लेत हैं इहां दोऊ हाथ सर्प है, पद कमल हैं, मुख चंद्रमा है, छाबि सुधा है ॥ ३ ॥ ऊपर उपमा रहित खेलौना देखि कैं किलकारी मारत औ पुनि पुनि हाथ पसारत हैं मानो दुइ कमल चंद्रमा के भय से आति आर्त सूर्य से विनय करत हैं। इहां खेलौना सूर्य हैं लाल रंग से औ हाथ दोऊ कमल है औ पुनि पुनि पसारना आर्तता है ॥ ४ ॥ गोसाईं जी कहत हैं कि वहु सुगंध ते विबस जो भ्रमर गुंजत है सो छबि बखानी नहीं जाति है मानों सकल बेदन की ऋचा भ्रमर है के श्रेष्ठ बानी ते उज्ज्वल सुयश रघुनाथ को बरनत हैं ॥ ४ ॥ २३ ॥

भूलत राम पालने सोहैं भूरि भाग जननी जन जोहैं। अधर पानि पद लोहित लोने सर सिंगार भव सारस सोने ॥३॥ किलकत निरषि बिलोल षिलौना मनहुं बिनोद लरत छबि छौना ॥ ४ ॥ रंजितअंजन कंजबिलोचन भ्राजत भाल तिलक गोरोचन ॥ ५ ॥ लसै मसिबिंदु बदन बिधु नीको चितवत चित चकोर तुलसी को ॥ ६॥२४ ॥

जोहैं देखत हैं ॥ १ ॥ तन कोमल के सुन्दर श्यामता में बाल समय के बिभूषणन की परिछाहीं झलकति है ॥ २ ॥ ओठ हाथ पद सुंदर लाल हैं मानो शृंगार रूप तडाग में लाल रंग के कमलैं उत्पन्न भए हैं इहां लुप्तोत्प्रेक्षा है इहां सर शृंगार से श्याम शरीर लेना काहे ते कि शृंगार रस भी श्याम है ॥३॥ खेलौना देखि चंचल है किलकत हैं मानो खेलवार में छबि के बालक लरत हैं। इहां हाथ पर हाथ पांव पर पांव का फेकना सो लरना है कमलवत् नेत्र जो अंजन से रंजित हैं औ भाल में गोरोचन कै तिलक शोभत है ॥५॥ सुंदर बिधु बदन में डिठौंना लसत है तेहि मुखचंद्र को चित रूप चकोर तुलसी को चितवत ॥६॥२४॥

रागकल्यान—राजत सिसुरूप राम सकलगुननिकाय

धाम कौतुकी कृपाल ब्रह्म जानु पानिचारी। नीलकंज जलद-पुंज मरकतमनि सदृश स्याम कामकोटि सोभा अंग अंग ऊपर वारी ॥ १ ॥ हाटक मनि रत्नखचित रचित इन्द्र-मंदिराभ इंदिरानिवास सदन बिधि रच्यौ सँवारी। बिहरत नृपअजिर अनुजसहित बालकेलिकुसल नील जलजलोचन हरि मोचन भय भारी ॥ २ ॥ अरुन चरन अंकुस ध्वज कंज कुलिस चिन्ह रुचिर भ्राजत अति नूपुर वर मधुर मुखर कारी। किंकिनी बिचित्र जाल कंबु कंठ ललित माल उर बिसाल केहरिनख कंकन कर धारी ॥ ३ ॥ चारु चिबुक नासिका कपोल भालतिलक भृकुटि श्रवन अधर सुंदर द्विज छबि अनूप न्यारी। मनहु अरुन कंजकोस मंजुल जुग पांति प्रसव कुंदकली जुगुल जुगल परम शुभ्र वारी ॥४॥ चिक्कन चिकुरावली मनो षडंघ्रिमंडली बनी बिसेषि गुंजत जनु बालक किलकारी। एकटक प्रतिबिंब निरखि पुलकत हरि हरषि हरषि लै उछंग जननी रसभंग मन बिचारी ॥ ५ ॥ जा कहं सनकादि संभु नारदादि शुक मुनिंद्र करत बिबिधि जोग काम क्रोध लोभ जारी। दसरथ गृह सोइ उदार भंजन संसा भार लीलाअवतार तुलसिदासत्रास हारी ॥ ६॥२५ ॥

सकल गुणसमूह के धाम कृपाल ब्रह्म कौतुकी शिशुरूप राम बकँइआं ह्वै शोभत हैं। रूप पद से यह जनाए कि रूप मात्र से शिशु हैं सकल गुणनिधान से वात्सल्यादि सकल गुण संपन्न जनाए। अर्थात् केवल निर्गुण नहीं, कौतुकी ते स्वतंत्र जनाए। कृपाल ते यह जनाए कि हैं तो ब्रह्म पै लोगन के सुख देवे हेतु घुटुरुअन ते चलत हैं, नील कंज जलद-पुंज मरकत मणि सदृश स्याम, इहां तीन उपमा दिए ताते मालोपमा अलंकार है वा कमलवत् कोमल औ मेघवत् गंभीर मरकतवत् द्युति

औ श्यामता तीनिउ को, अपर सुगम ॥ १ ॥ जेहि नृप को सदन सुवर्ण मणि रत्न से जडित औ रचित इंद्र मंदिर के सदृश लक्ष्मी को वासस्थान विधाता ने संवारि के रच्यौ तेहि नृप के आंगन में अनुज सहित हरि विहरत हैं सो कैसे हैं बालकेलि में कुशल हैं औ नीलकमल सम लोचन हैं जिन को औ भारी भय के नाशनिहारे हैं, मणि रत्न का भेद मणि नागादि ते होत है औ रत्न पर्वत ते, वह रत्न शब्द श्रेष्ठ वाचक है "रत्नं स्वजातिश्रेष्ठेऽपि इत्यमरः" अर्थात् श्रेष्ठ मणि ॥२॥ लाल चरण है तामें अंकुश ध्वज कमल वज्र के सुंदर चिन्ह हैं औ मधुर शब्द करनिहारा श्रेष्ठ नूपुर अतिही शोभत हैं औ कटि में विचित्र किंकिनिन को जाल कहैं समूह औ शंखवत्कंठ वा "रेखात्रयान्विता ग्रीवा कंबुग्रीवेति कथ्यते"। औ बिशाल उर है तामें सुंदर माला औ बघनहा है हाथ में कंकन धारण किए हैं ॥ ३ ॥ टोढ़ी नासिका कपोल भालतिलक भौंह कान औ ओष्ठ सुंदर हैं औ सुंदर उपमा रहित दांतन की छवि न्यारी है मानो लाल कमल के कोश में सुंदर दुइ पांति की प्रसव कहैं उत्पत्ति तिन्ह में परम शुभ्र वारी कहैं छोटी कुंदकली दुइ दुइ हैं। इहां लाल कमल कै कोश मुख है तामें ऊपर नीचे के दंतस्थान अर्थात् डाढ़ ते युग पांति हैं ता में छोटी छोटी दुइ दुइ जो दंतुली तेई कुंदकली हैं ॥४॥ चिक्कन जे बालन की पांति हैं ते मानो विशेष बनी भई भंवरन की मंडली है औ जो बालक की किलकारी है सोई मानो तिन का शब्द है एक टक ते प्रतिबिंब को देखि हरषि हरषि कै पुलकत जो हरि तिन को माता रसभंग जिय में विचारि कै गोद में लै लिए भाव अबहीं तो हरषत हैं अस न होय कि डरि उठैं वा हरि तो हरषि हराषि पुलकत हैं पर माता ने डर ते पुलकना विचारा ताते उठाय लिए ॥ ५ ॥ लीला अवतार लीला के हेतु अवतार है जेहि को ॥ ६ ॥ २५ ॥

राग कान्हरा—आंगन फिरत घुटुरुवनि धाए। नील-जलद तनु स्याम राम सिसु जननि निरषि मुष निकट बुलाए ॥१॥ बंधुक सुमन अरुन पद पंकज अंकुश प्रमुष चिन्ह बनि आए। नूपुर जनु मुनिबर कलहंसनि रचे नोड दै बांह

बसाए ॥२॥ कटि मेखल बर हार ग्रीव दर रुचिर बाहु भूषन पहिराए। उर श्रीवत्स मनोहर हरिनख हेम मध्य मनिगन बहु लाए ॥३॥ सुभग चिबुक द्विज अधर नासिका श्रवन कपोल मोहि अति भाए। भ्रू सुंदर करुनारसपूरन लोचन मनहुं जुगल जलजाए ॥४॥ भाल बिसाल ललित लटकन बर बाल दसा के चिकुर सोहाए। मनो दोउ गुरु सनि कुज आगे करि ससिहि मिलन तम के गन आए ॥५॥ उपमा एक अभूत भई तब जब जननी पट पीत ओढाए। नील जलद पर उडगन निरखत तजि सुभाव मानो तड़ित छपाए ॥६॥ अंग अंग पर मारनिकर मिलि छबिसमूह लै लै जनु छाए। तुलसिदास रघुनाथरूप गुन तौ कहौं जो बिधि होहि बनाए ॥ ७॥२६ ॥

घुटुरुवनि बकैंयां ॥१॥ दुपहरिआ के फूल सम लालचरन है तामें कमल अंकुश आदि चिन्ह बने हैं औ नूपुर है मानो रघुबर ने नूपुर रूप खोता रचे तेहि में मुनिवर रूप कलहंसनि कों बांह दै बसाए। भाव इहां कोई भय नहीं होयगो इहां बसना ध्यान करना है अंकुशादि चिन्ह यथा महारामायणे। रेखोर्द्ध्वावर्त्तते मध्ये दक्षिणस्यांघ्रिपंकजे॥ पादादौ स्वस्तिकंज्ञेयमष्टकोणस्तथैवच ॥१॥ श्रियंहलंचमुशलंसर्पोवाणांवरेतथा। पद्ममष्टदलंचैवस्यंदनंवज्रमुच्यते ॥२॥ यवोंगुष्ठे तथाप्येतारेखोर्द्ध्वावामतःस्थिताः। रेखोर्द्ध्वादक्षिणेचैवस्वस्तिकाग्रोब्जपादपः ॥ ३ ॥ अंकुशंचध्वजंचैवमुकुटंचक्रमेवच । सिंहासनंमृत्युदंडंचामरंछत्रमुच्यतं ॥ ४ ॥ नृचिन्हंयवमालेमेचतुर्विंशतिलक्षणाः। क्रमेणैवप्रवर्तन्तेश्रीरामस्यांघ्रिदक्षिणे ५ ऊर्द्धरेखायथासव्येऽपसव्येसरयूतथागोष्पदंपादमूलेचतदधःसागरांवरा ॥६॥ कुंभंचैवपताकांचजम्बूफलमथोच्यतं । अर्द्धचंद्रोदरश्चैवषट्कोणंचात्रिकोणकं ॥७॥ गदातथाचजीवात्माबिंदुरंगुष्ठमध्यगः। सरय्वादक्षिणेकोणेलक्षणंज्ञेयमुत्तमं ॥ ८ ॥ गोपदाधस्तथाशक्तिःसुधाकुंडमथोच्यतं । त्रिवलीकामपत्रं-

च पूर्णः सिंधुसुतस्तथा ॥९॥ बीणा वंसी धनुस्तूणोमरालश्चांद्रिकेति च । चतुर्विंशतिरामस्य चरणेवामके स्थिता ॥१०॥ चतुर्विंशतिरामस्येति छान्दसोदीर्घाभावः स्थितेति स्थितानीत्यर्थः । सुपांसुलुगितिसुपोडादेशः परमेव्योमन्सर्वाभूतानीत्यादिवत् । तानि सर्वाणि रामस्य पादे तिष्ठंति वामके । यानि चिन्हानि जानक्यादक्षिणे चरणे स्थिता ॥११॥ यानि चिन्हानि रामस्य चरणे दक्षिणे स्थिता । तानि सर्वाणि जानक्याः पादे तिष्ठंति वामके ॥१२॥ ऊर्द्धरेखारुणा ज्ञेया स्वस्तिकंपीतमुच्यते । सिताऽरुणंचाष्टकोणंश्रीश्च बालार्कसन्निभा ॥ १३ ॥ हलंच मुशलंचैव श्वेतधूम्रमितिस्मृतं । सर्पोऽसितस्तथा बाणः श्वेतपीतारुणोहरित् ॥ १४ ॥ नभोवदंबरं ज्ञेयमरुणं पंकजंस्मृ- । रथंबिचित्रवर्णंच युक्तं वेदहयैः सितैः ॥ १५ ॥ वज्रंतडिन्निभंज्ञेयं स्वेतरक्तं तथायवं । कल्पवृक्षं हरिद्वर्णमंकुशं श्यामसुच्यते ॥ १६ ॥ लोहिता च ध्वजा तस्यां चित्रवर्णाभिधीयते । सुवर्णं मुकुटं चक्रंरत्नसिंहासनाभकं ॥ १७ ॥ कांस्यवद्यमदंडं स्याचामरं धवलंमहत् । छत्रंचिन्हं शिवंशुक्लं नृचिन्हं सितलोहितम् । १८ ॥ बाणबज्रेच माला च वामे च सरयू सिता । गोष्पदश्च सितारक्तः पीतरक्तसिता मही ॥ १९ ॥ स्वर्णवर्णोऽसितं किंचित्कुंभोऽप्येवं प्रवर्तते । चित्रवर्णा पताकाच श्यामंजंबूफलंतथा ॥ २० ॥ धवलश्चार्द्धचद्रोऽतिरक्तईषत्‌सितोदरः । षट्कोणंच महास्वच्छं त्रिकोणोऽरुणएवच ॥२१॥ श्यामला तु गदा ज्ञेया जीवात्मा दीप्तिरूपकः । विंदुःपीतःतथा शक्तीरक्तस्यामसितापिच ॥ २२ ॥ सितरक्तं सुधाकुण्डंत्रिवलीच त्रिवेणीव । बर्तते रौप्यवन्मीनोधवलःपूर्णसिंधुजः ॥ २३ । पीतरक्तसिता बीणा बेणुश्चित्रबिचित्रकः । हरित्पीतोरुणश्चैव त्रिबिधंधनुरुच्यते ॥ २४ ॥ वेणुवद्वर्तते तूणोहंसईषत्सितारुण । सितपीतारुणा ज्योत्स्ना सर्वतोरंगमद्भुतं ॥ २५॥२ । कटि में किंकिनी कंबु कंठ में सुंदर हार औ सुंदर बाहु में भूषण पहिराए हैं उर में मनोहर श्रीवत्स औ बहु मणिगणयुक्त सुवर्न के मध्य में जो हारनिख सो उर में है "पीतं प्रदक्षिणावर्तं विचित्रंरोमराजिकं । विष्णोर्वक्षसियद्दीप्तं श्रीवत्संतत्प्रकीर्तितम्" ॥३॥ करुणा रस पूर्न जो लोचन है सो मानो दुइ कमल है॥४॥ सुंदर बिशाल भाल है तामें सुंदर लटकन औ बाल दशा के सुंदर बार हैं मानो दोऊ गुरु अर्थात् वृहस्पति शुक्र औ शनैश्चर मंगल आगे कारि

कै चंद्रमा के मिलवे को तम के समूह आए हैं इहां पोखराज हीरा नीलम मानिक के जो चारो लटकन हैं सोई बृहस्पति शुक्र शनि मंगल हैं मुख चंद्र है बिखरे बार जे मुख पर परे हैं ते तमगन हैं आगे करि आइवे को यह भाव कि अंधकार से चंद्रमा से बैर है ताते चंद्रमा के मान्य वर्ग कों आगे करि लिये अर्थात् बृहस्पति गुरु हैं शुक्र उपकारी हैं जब गुरुपत्नी से चंद्रमा ने कुचाल किया रहा तब शुक्र सहाय किए रहे भारत में ख्यात है औ शनि ग्रहराज जे सूर्य तिन के पुत्र हैं ताते एऊ मान्य हैं औ मंगल मित्र हैं ॥ ५ ॥ जब जननी पट पीत ओढ़ाए तब एक अद्भुत उपमा भई अब सो उपमा कहत हैं कि मानो श्याम मेघ पर तारागण को देखत मात्र चंचलता सुभाव छोड़ि कै बिजुरी ने छिपाय लिए अर्थात् तारागण को भाव तारागण की अयोग्यता करना देखिवे ते बिजुरी ने भी अयोग्यता किया ॥ ६ ॥ मानो अनेक काम मिलि कै छबि समूह को लैलै कै अंग अंग पर छावत भए गोसाईं जी कहत हैं कि रूप गुण रघुनाथ को तौ कहौं जौ ब्रह्मा के बनाए होंहिं वा जौं रघुनाथ ब्रह्मा के बनाए होंहिं तौ रूप गुण कहौं ॥ ७॥२६ ॥

राग केदारा । रघुबर बालछबि कहौ बरनि । सकल सुष की सीव कोटिमनोजश्राभाहरनि ॥ १ ॥ बसी मानहु चरन-कमलनि अरुनता तजि तरनि । रुचिर नूपुर किंकिनी मनु हरनि रुनझुन करनि ॥२॥ मंजु मेचक मृदुल तनु अनुहरति भूषन भरनि । जनु सुभग सिंगार सिसुतरु फर्यौ है अद्भुत फरनि ॥३॥ भुजनि भुजग सरोज नयननि बदन बिधु जित्यौ लरनि। रहे कुहरनि सलिल नभ उपमा अपर दुरि डरनि॥४॥ लसत कर प्रतिबिंब मनि आंगन घुटुरुअनि चरनि । जलज संपुट सुछबि भरि भरि धरति जनु उर धरनि ॥५॥ पुण्यफल अनुभवति सुतहि बिलोकि दसरथघरनि। बसत तुलसी हृदय प्रभु किलकनि ललित लरषरनि ॥ ६॥२७ ॥

रघुवर की बालछबि बर्नन करि कहत हौं सो छवि कैसी है कि सब सुख की मर्यादा है औ कोटि काम की शोभा हरानिहारी है ॥ १ ॥ मानो अरुनता सूर्य को छोड़ि कै चरण कमलन में आय बसी औ सुंदर नूपुर औ किंकिनी की रुनझुन करानि मन हराति है ॥ २ ॥ सुंदर श्याम कोमल तनु के योग्य भूषणन की भरनि है अर्थात् भराव है मानो सुंदर शृंगार रूप बाल तरु अद्भुत फरानि से फर्‌यौ है इहां । शृंगार रूप छोटा तरु रघुनाथ हैं औ भूषण जे शरीर में भरे हैं ते फल हैं अनुहराति कहिबे को यह भाव कि श्याम तन में जो रंग शोभा पावै । शृंगार तरु कहिबे को यह भाव कि शृंगार का रंग भी श्याम है । अद्भुत कहिबे को यह भाव कि छोटा तरु फरत नाहीं कदापि फरत भी है तौ अनेक रंग का फल नहीं ॥ ३ ॥ भुजों ने सर्प को औ नैनों ने कमल को औ मुख ने चंद्रमा को समर में जीत्यौ तें सब बिल, जल औ आकाश में रहे अर्थात् बिल में सर्प औ जल में कमल, आकाश में चंद्रमा रहे और अपर जेती उपमा ते डरानि से छपि रहीं भाव हमारी भी न दुर्दशा होय ॥ ४ ॥ घुटुरुअनि चलनि से मनि आंगन में हाथ को प्रतिबिंब सोहत है सो प्रतिबिंब नहीं है कमल को संपुट है तेहि में सुंदर छवि भरि भरि के मानो धरनी अपने उर में धराति है । इहां चाल प्रति जो परिछाहीं मेटात आवत है सोई उर में धरना है ॥ ५ ॥ श्री कौशल्या जू पुत्र को देखि कै अपने पुन्य फल को अनुभव कराति हैं औ तेहि समय की किलकनि औ लरखरनि प्रभु की तुलसी के हृदय में बसति है ॥ ६ ॥२७॥

नेकु बिलोकु धौं रघुवरनि । चारि फल त्रिपुरारि तोको दिये कर नृप घरनि ॥१॥ बाल भूषन बसन तनु सुंदर रुचिर रज भरनि ।परस्पर षेलनि अजिर उठि चलनि गिरि गिरि परनि ॥ २ ॥ झुकनि झांकनि छांह सों किलकनि नटनि हठि लरनि । तोतरी बोलनि बिलोकनि मोहनी मन हरनि ॥ ३ ॥ सषि बचन सुनि कौसिला लषि सुढर पासे ढरनि । लेत भरि भरि अंक सैतति पैत जनु दुहुकरनि ॥४॥

चरित निरषत बिबुध तुलसी ओट दे जल धरनि। चहत सुर सुरपति भयो सुरपति भयो चह तरनि ॥ ५॥२८॥

कौशल्या जू को और काम में लगी देखि सखी कहति है हे नृप-घरनि चारो भैअन को नेकु देखु तौ मानो त्रिपुरारि ने चारो फल तोको हाथ पर दिए हैं इहां उत्प्रेक्षा है ॥ १ ॥ अजिर आंगन ॥ २ ॥ नटनि नाचनि ॥ ३ ॥ सखी के बचन सुनि कै औ सुंदर पासे की ढरनि लखि के अर्थात् सुकृत को फल जानि कै कौशल्या जू चारो भैअन कों गोदी में उठाय उठाय लेत हैं मानो उठाय नहीं लेत हैं पैत कहैं दाव ताको दोऊ हाथ से बटोरत हैं। भाव जीत कै जब पासा देखत है तब खेलारी जो दांव पर द्रव्य धरा रहत है ताको दूनो हाथ से बटोरि लेत है ॥ ४ ॥ देवता इंद्र भयो चाहत है औ इन्द्र सूर्य भयो चाहत हैं। भाव देवता हजार नेत्र तें देखिवे हेतु इन्द्र भयो चाहत हैं औ इन्द्र विश्व भरि के नेत्र तें देखिवे हेतु सूर्य भयो चाहत हैं अर्थात् सूर्य सब के नेत्र में रहत हैं ॥ ५॥२८ ॥

रागजैतश्री—भूमितल भूप के बडे भाग। राम लषन रिपुदमन भरत सिसु निरषत अति अनुराग ॥१॥ बाल बिभूषन लसत पाइ मृदु मंजुल अंग बिभाग। दसरथ सुकृत मनोहर बिरवनि रूप करह जनु लाग ॥ २ ॥ राज मराल बिराजत बिहरत जे हरहृदय तडाग। ते नृपअजिर जानु कर धावत धरन चटक चल काग ॥३॥ सिद्ध सिहात सराहत मुनि मन कहै सुर किन्नर नाग। ह्वै बरु बिहंग बिलोकिये बालक बसि पुर उपबन बाग ॥४॥ परिजन सहित राय रानिन्ह कियो मज्जन प्रेम प्रयाग। तुलसी फल चारयो ताके मनि मरकत पंकज राग ॥ ५॥२९ ॥

सुंदर कोमल अंगन के बिभाग पाइ के बाल समय को विभूषण

शोभत है मानों श्री दशरथ महाराज के सुकृत रूपी मनोहर बिरवानि में रूप रूपी करहा लगा। बिरवा बाल तरु को कहत हैं ॥२॥ जे राज मराल हर के हृदय रूपी तडाग में बिहरत बिराजत ते दशरथ महाराज के आंगन में चंचल काग के धरन को बकैंयां ते शीघ्र धावत हैं। इहां चंचल काग भुशुंडी जी हैं "किलकल मोहि धरन जब धावहिं। चलौं भागि तब पूप देषावहिं" वा चटक गंवरा औ चंचल काग के धरन को धावत हैं ॥ ३ ॥ सिद्धि सिहात हैं, भाव अस भाग हमारो न भयो औ मुनिगन सराहत हैं, भाव कहत हैं कि महाराज सब ते धन्य हैं औ सुर किन्नर नाग कहत हैं वरु पुर के उपबन और बाग में बिहंग है बसि बालकानि को बिलोकिए। पुर के समीप सो उपबन दूरि सो बाग ॥४॥ परिवार सहित राजा औ रानिन्ह ने प्रेमरूपी प्रयाग में मज्जन कियो तेहि मज्जन के फल चारिउ बालक हैं। मरकत मणि औ पद्मराग मणि के सम अर्थात् नीलमणि सम श्री राम जू औ भरत जू, पंकज राग सम लक्ष्मण जू औ शत्रुघ्न जू हैं ॥ ५॥२९ ॥

राग असावरी—छगन मगन आंगन षेलत चारु चारयौ भाई। सानुज भरत लाल लषन राम लोने लोने लरिका लषि मुदित मातु समुदाई ॥१॥ बाल बसन भूषन धरे नष सिष छबि छाई। नील पीत मनसिज सरसिज मंजुल मालनि मानो इन्ह देहनि ते दुति पाई ॥ २ ॥ ठुमुकि ठुमुकि पग धरनि नटनि लरषरनि सोहाई। भुजनि मिलनि रूठनि टूठनि किलकनि अवलोकनि बोलनि बरनि न जाई ॥ ३ ॥ जननि सकल चहुं वोर आल बाल मनि अंगनाई। दसरथ सुकृत बिबुध बिरवा बिलसत बिलोकि जनु बिधि बर बारि बनाई ॥ ४ ॥ हर बिरंचि हरि हेरि राम प्रेम परबसताई। सुष समाज रघुराज के बरनत बिसुद्ध मन सुरनि सुमन झरिलाई ॥ ५ ॥ सुमिरत श्रीरघुबरनि की लीला लरिकाई।

तुलसिदास अनुराग अवध आनंद अनुभवत तब को सो अजहु अघाई ॥ ६॥३० ॥

सुगम ॥ १ ॥ काम को नील पीत कमल की मालौं ने मानहुं इन देहन ते द्युति पाई है ॥२॥ ठुठनि प्रसन्न होनि ॥ ३ ॥ मणि का आंगन नहीं है थाहा है चारो भैया नहीं हैं दशरथ सुकृत के बाल कल्पवृक्ष हैं ताको बिलसत देखि कै ब्रह्मा ने माता रूपी श्रेष्ठवारि चारो ओर बना हैं बारि रूंधानि ॥ ४ ॥ शिव ब्रह्मा विष्णु राम की प्रेम ते परवसताई देखि कै दशरथ महाराज के सुख समाज को विशुद्ध मन ते वर्नत हैं औ देवतो ने फूलनि की झरिलाई है ॥ ५ ॥ श्री मान् चारो भैयन की लरिकाई की लीला सुमिरत मात्र तुलसीदास अनुराग रूप अवध में तब के ऐसो आनंद अजहु अघाय कै अनुभव करत हैं ॥ ६ ॥ ३० ॥

राग बिलावल– आंगन खेलत आनदकंदा। रघुकुल कुमुद सुषद चारु चंदा ॥१॥ सानुज भरत लषन संग सोहै। सिसु भूषन भूषित मन मोहै ॥२॥ तनु दुति मोर चंद जिमि झलकै। मनहुं उमगि अंग अंग छबि छलकै ॥ ३ ॥ कटि किंकिनी पाय पैजन बाजै। पंकज पानि पहुचिया राजै ॥४॥ कठुला कंठ बघनहा नीकै। नयन सरोज मयन सरसीकै ॥५॥ लटकन लसत ललाट लटूरी। दमकत द्वै द्वै दंतुरिआ रूरी ॥६ मुनिमन हरत मंजु मसि बुंदा। ललित बदन बलि बाल मुकुंदा ॥ ७ ॥ कुलही चित्र बिचित्र झँगूली। निरषत मातु मुदित प्रतिफूली ॥ ८ ॥ गहिमनिषंभ डिंभ डगि डोलत। कलबल बचन तोतरे बोलत ॥ ९ ॥ किलकत झुंकि झांकत प्रतिबिंबनि। देत परम सुष पितु अरु अंबनि ॥१०॥ सुमिरत सुषमा हियहुलसी है। गावत प्रेम मगन तुलसी है ॥११॥३१॥

१ । २ । ३ । पंकज पाणि कर कमल ॥ ४ ॥ मानो नेत्र काम के

तड़ाग के कमल हैं वा काम रूप तड़ाग के ॥ ५ ॥ रूरी भली ॥६॥७॥ कुलही टोपी औ झंगुली अंगरखी, मातु बलिहारी जात संते हर्षहिं बलि जो पूर्व पद में है ताको अन्वय इहां करना ॥ ८ ॥ डिंभ बालक ।९।१० सुषमा परमा शोभा ॥ ११ ॥ ३१ ॥

राग कान्हरा—ललित सुतहि लालति सचुपाये। कौसल्या कल कनक अजिर महं सिषवत चलन अंगुरिया लाये ॥ १ ॥ कटि किंकिनो पैजनिआ पायेन बाजत रुनझुन मधुर रिंगाए। पहुंची करनि कंठ कठुला बन्यौ केहरिनष मनि जरित जराये ॥ २ ॥ पीत पुनीत बिचित्र झंगुलिया सोहत स्याम सरीर सोहाये। दंतिया द्वै द्वै मनोहर मुषछबि अरुन अधर चित लेत चुराये ॥ ३ ॥ चिबुक कपोल नासिका सुंदर भाल तिलक मसिबिंदु बनाये। राजत नयन मंजु अंजनयुत षंजन कंज मीन मदुनाये ॥ ४ ॥ लटकन चारु भृकुटिआं टेढ़ी मेढ़ी सुभग सुदेस सुभाये। किलकि किलकि नाचत चुटकी सुनि डरपति जननि पानि छुटकाये ॥ ५ ॥ गिरि घुटुरुनि टेकि उठि अनुजनि तोतरि बोलत पूप देषाये। बालकेलि अवलोकि मातु सब मुदित मगन आनंद अनमाये ॥ ६॥ देषत नभ घन वोट चरित मुनि जोग समाधि बिरति बिसराये। तुलसिदास जे रसिक न येहि रस ते जन जड जीवत जग जाये ॥ ७ ॥ ॥ ३२ ॥

लालतिकहैं दुलाराति, सचुपाए आनंद पाए, कल सुंदर॥ १ ॥ मधुर रिंगाए धीरे धीरे चलाए औ इहां जो जड़ाए शब्द है ताको रूढ़ि लक्षणा कारि पहिराये अर्थ करना ॥ २ ॥ ३ ॥ खंजन कमल मीनो के मद कों नीचे किए अंजन युत सुंदर नयन शोभत हैं ॥ ४ ॥ मेढ़ी आदि को अर्थ पहिले लिखि आए, पानि छुटकाए हाथ छोड़ाए में जननी डरपति

ह वा आप श्री राम डरपत हैं ॥ ५ ॥ पूप देखाए माता के मालपूआ देखाए से तोतर बोलत अर्थात् तोतराय कै मागत बालकेलि देखि कै माता सब हर्षित हैं औ अनमाए कहैं जो न अमाय अर्थात् अपार आनंद तेहि में मगन हैं ॥ ६ ॥ विरति वैराग्य जाए वृथा ॥७॥३२ ॥

राग ललित । छोटी छोटी गोड़िआं अंगुरिआं छोटी छबीली । नष जोति मोती मानो कमल दलनि पर । ललित आंगन षेलै ठुमुकि ठुमुकि चलै झुंझुन झुंझुन पाय पैंजनी मृदु मुषर ॥ १ ॥ किंकिनी कलित कटि हाटक रतन जटि मंजु कर कंजनि पहुचिआ रुचिरतर । पिअरी झीनी झंगुली सांवरे सरीर षुली बालक दामिनि ओढी मानो बारे बारि-धर ॥२॥ उर बघनहा कंठ कठुला झंगूले केस मेढी लटकन मसिबिंदु मुनिमन हर । अंजन रंजित नैन चित चोरै चित-वनि मुष शोभा परवारों अमित असमसर ॥ ३ ॥ चुटकी बजावति नचावति कौसल्या माता बालकेलि गावति मल्हावत प्रेम सुभर । किलकि किलकि हंसे द्वै द्वै दंतुरिआं लसै तुलसी कै मन बसै तोतरे बचन बर ॥ ४॥३३ ॥

मृदु मुखर कोमल शब्द से ॥ १ ॥ कटि में किंकिनी शोभित है औ सोना रत्न से जड़ी अतिशय सुंदर पहुंचियां सुंदर कर कमलनि में हैं औ बालक के सांवरे शरीर में खुलै वाली पीत रंग की झीनी झंगुली है मानो बालक नहीं है छोटे मेघ हैं झिंगुली नहीं है दामिनि है ताको ओढ़ि लई है ॥ २ ॥ झंगुले केश बिखरे बार असममर कहैं पंचबाण अर्थात् काम ॥ ३ ॥ प्रेम सुभर प्रेम में सुंदर भरि ॥ ४॥३३ ॥

सादर सुमुषि बिलोकि राम सिसु रूप अनूप भूप लिये कनियां । सुंदर स्याम सरोज बरन तन सब अंग सुभग सकल सुष दनियां ॥ १ ॥ अरुन चरन नष जोति जग-

मगति रुनझुन करति पांय पैंजनियां। कनक रतन मनि जटित रटति कटि किंकिनि कलित पीतपटतनियां ॥ २ ॥ पहुंची करनि पदिक हरि नष उर कठुला कंठ मंजु गज-मनियां। रुचिर चिबुक रद अधर मनोहर ललित नासिका लसति नथुनियां ॥ ३ ॥ बिकट भृकुटि सुषमानिधि आनन कल कपोल कानन नगफनियां। भाल तिलक मसिबिंदु बिराजत सोहत सीस लाल चौतनियां ॥ ४ ॥ मन मोहनी तोतरी बोलनि मुनिमन हरनि हसनि किलकनियां। बाल सुभाय बिलोल बिलोचन चोरति चितहि चारु चितवनियां ॥ ५ ॥ सुनि कुलबधू झरोखनि झांकति रामचंद्रछबि चंद्रबदनियां। तुलसिदास प्रभु देषि मगन भई प्रेमबिबस कछु सुधि न अपनियां ॥ ६॥३४ ॥

हे सुमुखि रूप है अनूप जेहि को तेहि राम शिशु को भूप गोद में लिए हैं ते देखु, सखी को उक्ति है ॥ १ ॥ पीत पटतनियां करिके कलित कहैं युक्त जो कटि तेहि में रतन मणिन से जड़ित जो कनकमयी किंकिनी सो रटति है। पीतपट तनियां कहैं पीत रंग के बस्त्र की कछनी, मारवाड़ में लंगोटी को तनियां कहत हैं पर इहां राजकुमार हैं ताते कछनी जानना ॥ २ ॥ पदिक धुकधुकी गजमानियां गजमुक्ता रद दांत ॥ ३ ॥ बिकट टेढ़ कल सुंदर नगफनियां कान को भूषण प्रसिद्ध है जाको काशी आदि देश में दुर्बचा भी कहत हैं, चौतनियां टोपी ॥ ४ ॥ बिलोल चंचल ॥ ५ ॥ यह सखी को बचन सुनि चंद्रबदनी कुलबधू झरोखनि तें झाकति हैं। यह कथा सत्योपाख्यान में स्पष्ट है ॥ ६॥३४ ॥

राग बिलावल। सोहत सहज सोहाये नयन। षंजन मीन कमल सकुचत तब जब उपमा चाहत कबि दैन ॥१॥ सुंदर सब अंगनि सिसुभूषन राजत जनु सोभा आये लैन।

बडो लाभ लालची लोभबस रहि गए लखि सुषमा बहु मैन ॥२॥ भोर भूप लिए गोद मोद भरे निरषत बदन सुनत कल दैन। बाल रूप अनूप राम छबि निवसति तुलसिदास उर ऐन ॥ ३। ३५ ॥

सहज सोहाए अर्थात् अंजनादि बिना ॥ १ ॥ सुंदर सब अंगन में बालभूषण शोभत हैं। मानो भूषण नहीं हैं बहु काम हैं ते शोभा लेवे को आवत भए पर सुषमा रूप बड़ो लाभ लखि लालची काम लोभ बस रहि गए ॥२॥ निवसति उर ऐन हृदय रूपी गृह में बसति ॥३।३५

राग बिभास—भोरभयो जागहु रघुनंदन गतव्यलीक भगतनि उरचंदन। ससिकर हीन छीन दुतितारे तमचर मुषर सुनहु मेरे प्यारे ॥ १ ॥ बिकसत कंजकुमुद बिलषाने। लै पराग रस मधुप उडाने। अनुज सषा सब बोलनि आए। बंदिन्ह अतिपुनीत गुनगाए ॥ २ ॥ मनभावतो कलेऊ कीजै। तुलसिदास कहँ जूठन दीजै ॥ ३ ॥ ३६ ॥

माता की उक्ति है। हे रघुनंदन भोर भयो जागहु। तुम कैसे हौ कि व्यलीक कहैं कपट तेहि करि रहित जो भक्त तिन के उर के चंदन हौ अर्थात् शीतल करनिहारे ॥ १ ॥ चंद्रमा किरन रहित भए औ तारन की द्युति छीन भई औ मुरुगा बोलि रहे हैं तेहि शब्द को सुनहु ॥ २ ॥ कमल फूले औ कोई सम्पुटित भई औ कमलन की धूरी रस लैके भ्रमर उड़त भए ॥ ३।३६ ॥

प्रात भयो तात बलि मातु बिधुबदन पर मदनवारो कोटि उठो प्रानप्यारे। सूत मागध बंदी बदत बिरदावली द्वारसिसु अनुज प्रियतम लिहारे ॥ १ ॥ कोकगत सोक अवलोकि ससि छीन छबि अरुनमय गगन राजत रुचिर तारे। मनहु रबि ाल मृगराज तमनिकर करि दलित अति ललित मनिगन

बिथारे ॥२॥ सुनहु तमचर मुखर कीर कलहंस पिक केकि रव कलित बोलत बिहंगवारे । मनहुं मुनिवृन्द रघुवंसमनि रावरे गुनगुन आश्रमनि सपरिवारे ॥ ३ ॥ सरनि बिकसति कंजपुंज मकरंद बर मंजुतर मधुर मधुकर गुंजारे । मनहुं प्रभुजन्म सुनिचयन अमरावती इंदिरानंद मंदिर संवारे ॥४॥ प्रेम संमिलित वर बचन रचना अकनिराम राजीव लोचन उधारे । दास तुलसी मुदित जननि करै आरती सहज सुंदर अजिर पांउ धारे ॥ ५ ॥ ३७ ॥

हे तात ! प्रात भयो, मैं माता बलि जाउं औ तुम्हारे सुख चन्द्र पर कोटि मदन वारों । हे प्रानप्यारे उठो, पौराणिक कथक भांट बिरदावली कहत हैं औ तुम्हारे अतिशय प्रिय बालक और अनुज द्वार पर खड़े हैं ।१॥ चंद्रमा की छवि छीन देखि कै चक्र वाक शोक रहित भए औ लाल रंग मय आकाश में सुंदर तारे राजत हैं । मानो बाल रवि रूप सिंह ने तमसमूह रूप हाथिन को बिदारित करि अति सुंदर मणि गणन को छितिराय दियें । इहां मणिगण तारा हैं मुरगा बोलत हैं औ सूगा औ राजहंस औ कोइलि औ मोर रव कलित कहैं शब्दयुक्त हैं सुनत बचौ पच्छिन के बोलत हैं सो सुनहु । पक्षी औ पक्षिन के बच्चा नहि बोलत हैं हे रघुवंशमणि मानो मुनिगन परिवार सहित आश्रमन में आप के गुण बर्णत हैं, इहां आश्रम खोंता है । ३ । तड़ागन में कमलन के समूह प्रफुल्लित हैं तिन में श्रेष्ठ रस है तापर भ्रमर अति सुंदर मधुर गुंजार करत हैं मानो भ्रमर गुंजार नहीं करत हैं प्रभु को जन्म सुनि के इन्द्र के पुरी में चयन है अर्थात् देवता लोग नृत्यगान करत हैं प्रफुल्लित कमल नहीं है लक्ष्मी ने आनंद को मंदिर बनायो है ॥ ४ ॥ प्रेमयुक्त श्रेष्ठ बचन रचना सुनि श्रीराम कमल सम नेत्र उघारत भए । गोसाईं जी कहत हैं कि हरषित जननी आरती करति हैं औ सहज सुंदर जो रघुनाथ सो आंगन में पधारत भए ॥ ५ ॥ ३७ ।

जागिये कृपानिधान जानि राय रामचन्द्र जननी कहै

बडो लाभ लालची लोभबस रहि गए लषि सुषमा बहु मैन ॥२॥ भोर-भूप लिए गोद मोद भरे निरषत बदन सुनत कल दैन। बाल रूप अनूप राम छबि निवसति तुलसिदास उर ऐन ॥ ३। ३५ ॥

सहज सोहाए अर्थात् अंजनादि बिना ॥ १ ॥ सुंदर सब अंगन में बालभूषण शोभत हैं। मानो भूषण नहीं हैं बहु काम हैं ते शोभा लेवे को आवत भए पर सुषमा रूप बड़ो लाभ लखि लालची काम लोभ बस रहि गए ॥२॥ निवसति उर ऐन हृदय रूपी गृह में बसति ॥३।३५

राग बिभास—भोरभयो जागहु रघुनंदन गतव्यलीक भगतनि उरचंदन। ससिकर हीन छीन दुतितारे तमचर मुषर सुनहु मेरे प्यारे ॥ १ ॥ बिकसत कंजकुमुद बिलषाने। लै पराग रस मधुप उडाने । अनुज सषा सब बोलनि आए। बंदिन्ह अतिपुनीत गुनगाए ॥ २ ॥ मनभावतो कलेऊ कीजै। तुलसिदास कहँ जूठन दीजै ॥ ३ ॥ ३६ ॥

माता की उक्ति है। हे रघुनंदन भोर भयो जागहु। तुम कैसे हौ कि व्यलीक कहैं कपट तेहि करि रहित जो भक्त तिन के उर के चंदन हौ अर्थात् शीतल करनिहारे ॥ १ ॥ चंद्रमा किरन रहित भए औ तारन की द्युति छीन भई औ मुरुगा बोलि रहे हैं तेहि शब्द को सुनहु ॥ २ ॥ कमल फूले औ कोई सम्पुटित भई औ कमलन की धूरी रस लैके भ्रमर उड़त भए ॥ ३।३६ ॥

प्रात भयो तात बलि मातु बिधुबदन पर मदनवारो कोटि उठो प्रानप्यारे। सूत मागध बंदी बदत बिरदावली द्वारसिसु अनुज प्रियतम तिहारे ॥ १ ॥ कोकगत सोक अवलोकि ससि छीन छबि अरुनमय गगन राजत रुचिर तारे। मनहु रबि ।ल मृगराज तमनिकर करि दलित अति ललित मनिगन

बिथारे ॥२॥ सुनहु तमचर मुषर कीर कलहंस पिक केकि रव कलित बोलत बिहंगवारे । मनहुं मुनिवृन्द रघुवंसमनि रावरे गुनलगुन आश्रमनि सपरिवारे ॥ ३ ॥ सरनि बिकसति कंजपुंज मकरंद बर मंजुतर मधुर मधुकर गुंजारे। मनहुं प्रभुजन्म सुनिचयन अमरावती इंदिरानंद मंदिर संवारे ॥४॥ प्रेम संमिलित बर बचन रचना अकनिराम राजीव लोचन उधारे । दास तुलसी मुदित जननि करै आरती सहज सुंदर अजिर पांउ धारे ॥ ५ ॥ ३७॥

हे तात ! प्रात भयो, मैं माता बलि जाउं औ तुम्हारे मुख चन्द्र पर कोटि मदन वारों। हे प्रानप्यारे उठौ, पौराणिक कथक भांट बिरदावली कहत हैं औ तुम्हारे अतिशय प्रिय बालक और अनुज द्वार पर खड़े हैं ।१॥ चंद्रमा की छबि छीन देखि कै चक्र वाक शोक रहित भए औ लाल रंग मय आकाश में सुंदर तारे राजत हैं। मानो बाल रवि रूप सिंह ने तमसमूह रूप हाथिन को बिदारित करि अति सुंदर मणि गणन को छितिराय दिये। इहां मणिगण तारा हैं मुरगा बोलत हैं औ सूगा औ राजहंस औ कोइलि औ मोर रव कलित कहैं शब्दयुक्त हैमुनत बचौ पच्छिन के बोलत हैं सो सुनहु । पक्षी औ पक्षिन के बच्चा ने बोलत हैं हे रघुवंशमणि मानो मुनिगन परिवार सहित आश्रमन में आप के गुण वर्णत हैं, इहां आश्रम खोंता है। ३ । तड़ागन में कमलन के समूह प्रफुल्लित हैं तिन में श्रेष्ठ रस है तापर भ्रमर अति सुंदर मधुर गुंजार करत हैं मानो भ्रमर गुंजार नहीं करत हैं प्रभु को जन्म सुनि के इन्द्र के पुरी में चयन है अर्थात् देवता लोग नृत्यगान करत हैं प्रफुल्लित कमल नहीं है लक्ष्मी ने आनंद को मंदिर बनायो है ॥ ४ ॥ प्रेमयुक्त श्रेष्ठ बचन रचना सुनि श्रीराम कमल सम नेत्र उघारत भए। गोसाईं जी कहत हैं कि हरषित जननी आरती करति हैं औ सहज सुंदर जो रघुनाथ सो आंगन में पधारत भए ॥ ५ ॥ ३७ ।

जागिये कृपानिधान जानि राय रामचन्द्र जननी कहै

बार बार भोर भयो प्यारे । राजिवलोचन बिसाल प्रीति बापिका मराल ललित कमल बदन उपर मदन कोटि वारे ॥ १ ॥ अरुन उदित बिगत सर्वरी ससांक किरनि हीन दीन दीप ज्योति मलिनदुति समूह तारे। मनहु ज्ञान घन प्रकास बीते सब भौ बिलास आस त्रास तिमिर तोष तरनि तेज जारे ॥ २ ॥ बोलत षग निकर मुषर मधुर करि प्रतीत सुनहु श्रवन प्रान जीवन धन मेरे तुम वारे । मनहु बेद बंदी मुनि वृंद सूत मागधादि बिरुद बदत जय जय जय जयति कैटभारे ॥ ३ ॥ बिकसित कमलावली चले प्रपुंज चंचरीक गुंजत कल कोमल धुनि त्यागि कंज न्यारे। जनु बिराग पाइ सकल सोक कूप गृह बिहाइ भृत्य प्रेममत्त फिरत गुनत गुन तिहारे ॥ ४ ॥ सुनत बचन प्रिय रसाल जागे अतिसय दयाल भ[illegible] जंजाल बिपुल दुषकदंब टारे। तुलसि[illegible] अति अनंद देषि कै मुषारबिंद छूटे भ्रमफंद परम [illegible] द्वन्द भारे ॥ ५॥३८ ॥

जननी बारबार कहति है। हे कृपानिधान जानी जे ब्रह्मादि तिन के स्वामी लालकमल सम विशाल लोचन प्रीति रूपी बाउली के हंस सुंदर कमल बदन ऊपर कोटि काम वारे गए भए मेरे प्यारे रामचन्द्र भोर भयो जागिए। इहां षट् विशेषण ते षट ऐश्वर्य युक्त जनाए औ कृपानिधान जानि राय प्रीति वापिका मराल ए तीनि विशेषण ऐश्वर्य के दिए, प्यारे राजीवलोचन बिशाल ललित कमल बदन ऊपर कोटि मदन वारे, ए तीनि विशेषण माधुर्य्य के दिए, तेहि ते ऐश्वर्य माधुर्य दूनों में अपनी रुचि जनाए। श्री कौशल्या जी को वरदान है। मातु विवेक अलौकिक तोरे। कबहुं न मिटिहि अनुग्रह मोरे ॥ ताते विवेक न मिटेउ ॥ १ ॥ सूर्य उए रात्रि बीती चन्द्रमा किरणहीन औ दीप की ज्योति

दीन अर्थात् शोभाहीन औ सब तारन की द्युति मलीन मानो सूर्य नहीं उए पूर्ण ज्ञान को प्रकाश भयो औ रात्रि नहीं बीती भव का बिलास अहंता ममतादि बीत्यो औ आश त्रास रूप अंधकार को तोष रूप सूर्य के तेज ने जराय दिये ॥ २ ॥ हे प्राण जीवन धन मेरे बारे मधुर शब्द ते पक्षीन के समूह बोलत हैं, हमारे बचन को विश्वास करि श्रवन तें तुम सुनहु मानो पक्षी नहीं बोलत हैं वेद रूप बंदी औ मुनि-वृंद रूप सूत मागधादि जय जय जय जय जयति कैट भारे कहि यस कहत हैं ॥३॥ कमल समूहों के फूलत मात्र कमलन के त्यागि के पृथक है भंवरन के समूह सुंदर कोमल धुनि तें गुंजत चले। भाव सायंकाल में कमलन के संपुटित होवे तें भीतर पड़ि गए रहे ते उड़ि चले ते भ्रमर कमल बिहाय गुंजार करत नहीं उड़त हैं मानो बैराग्य पाय सब शोक रूप गृह कूप छोड़ि कै तिहारे सेवक गुण को गुणत प्रेम में मत्त फिरत हैं। संपुटित कमल का गृह कूप में उत्प्रेच्छा करने का यह भाव कि संपुटित कमल से भी निकलना कठिन है औ गृह कूप से भी निकलना कठिन है औ संपुटित भए पर भ्रमर को केवल कमलै देखि परत है तैसे गृहकूप में जे पड़े हैं तिन को केवल घरै देखि पड़त है । इहां कमल के प्रफुल्लित होए से भ्रमर छुट्टी पावत है इहां प्रभु कृपा करि जब निकालै तब छुट्टी पावै ॥ ४ ॥ रसाल प्रिय बचन सुनत मात्र अतिशय दयाल जे श्री राम ते जागे। जंजाल भागत भए औ अनेक दुःखन के समूहन के टारत भए। गोसाईं जी कहत हैं कि दास मुखार-बिंद देखि कै अति अनंद भए तातें माया के परम मंद भारे भ्रम फंद छूटे ॥ ५ ॥ ३८ ॥

बोलत अवनिपकुमार ठाढे नृप भवन द्वार रूप सील गुन उदार जागहु मेरे प्यारे । बिलखित कुमुदिनि चकोर चक्रवाक हरष भोर करत सोर तमचर खग गुंजत अलि न्यारे ॥ १ ॥ रुचिर मधुर भोजन करि भूषन सजि सकल अंग संग अनुज बालक सब बिबिधिबिधि संवारे । करतल गहि ललित चाप भंजन रिपुनिकरदाप कटितट पटपीत

तून सायक अनियारे । २ ॥ उपवन मृगया बिहार कारन गवने कृपाल जननी मुष निरष पुन्य पुंज निज बिचारे । तुलसिदास संग लीजै जानि दीन अभै कीजै दीजै मति बिमल गावै चरितवर तिहारे ॥ ३॥३९ ॥

राजभवन के दरवाजे पर राजन के बालक ठाढे भए बोलत हैं अर्थात् तुम्हारे जागिवे को प्रत्यासा देखत हैं । हे रूपशील गुन उदार मेरे प्यारे जागहु, भोर भए ते कोई औ चकोर बिलखात हैं औ चक्रबाक को हरष है मुरगा औ और पक्षी शोर करत हैं और भ्रमर न्यारे गुंजार करत हैं, एतना सुनि जागे यह शेष है ॥१॥ अनुज औ बालक सब जे बिबिधि विधि संवारे भए हैं तिन के संग सुंदर मधुर भोजन करि के औ सकल अंगन में भूषन औ कटिदेश में पीतपट औ तरकस चोखे सायक युक्त साजि के औ रिपु समूहन के अहंकार भंजन करनिहारा सुंदर चापहस्ततल में गहि के उपवन में शिकार खेलिवे के हेतु कृपाल गवने । जननी ने मुख देखि के अपने पुन्य का समूह बिचारा । कृपाल कहिवे को भाव मानस रामायन में स्पष्ट है । जे मृग राम बान के मारे । ते तनु तजि सुरलोक सिधारे । गोसाईं जी कहत हैं कि हम को संग लीजै औ दीन जानि के अभै कीजे औ निर्मल मति दीजै जाते तेहारे श्रेष्ठ चरित्रन को गावैं । इहां गोसाईं जू आवेस मे देहाध्यास भूलि प्रत्यक्ष सम कहे ॥ ३९ ॥

रागनट—षेलन चलिअै आनदकंद । सषा प्रिय नृप द्वार ठाढे बिपुल बालक बृन्द ॥१॥ तृषित तुम्हरे दरस कारन चतुर चातक दास । बपुष बारिद बरषि छबि जल हरहु लोचन प्यास ॥२॥ बंधु बचन बिनीत सुनि उठे मनहु केहरि बाल । ललित लघु सर चाप कर उर नयन बाहु विसाल ॥३॥ चलत पद प्रतिबिंब राजत अजिर सुषमापुंज । प्रेमबस प्रतिचरन महि मानो देति आसन कंज ॥ ४ ॥ निरषि परम बिचित्र

सोभा चकित चितवहिँमात। हरष बिबस न जात कहि निजभवन बिहरहु तात ॥ ५ ॥ देषि तुलसीदास प्रभुछबि रहे सब पल रोकि। थकित निकर चकोर मानहु सरद इंदु बिलोकि ॥ ६ ॥ ४० ॥

सखा औ प्रिय जे बालकन के अनेक युत्थैं ते, नृपद्वार में खड़े हैं वा सखा औ प्रिय औ बालकन के अनेक युत्थैं नृपद्वार में खड़े हैं, तुम्हारे दरस के कारन, चतुरदास रूप चातक जे त्रिषित हैं तिन को सरीर रूप मेघ ते छवि रूप जल बरषि कै नेत्रन की प्यास हरहु ॥२। बिनीत नम्र केहरि बालक कहैं सिंह को बालक ॥३॥ परम शोभा पुंज जो आंगन है तेहि में चलत संते पद की परिछाहीं शोभति है सो परिछाहीं नहीं है मानो प्रेमबस चरण प्रति पृथ्वी कमलन के आसन देति है ॥ ४ ॥ हर्ष के विशेष बस हैं ताते नहीं कहिजात है कि हे तात निज भवन में बिहरहु अर्थात् बाहर न जाहु ॥ ५ ॥ गोसांईं जी कहत हैं कि प्रभुछबि देखि कै सब पलक रोकि रहे मानो चकोरन के समूह सरद पूनो के चंद को देखि थकित भए ॥ ६ ॥ ४० ॥

बिहरत अवध बीथिन्ह राम। संग अनुज अनेक सिसु नव नील नीरद स्याम ॥ १ ॥ तरुन अरुन सरोजपद बनि कनकमय पद त्रान। पीत पट कटि तून बर कर ललित लघु धनुबान ॥ २ ॥ लोचननि को लहत फल छबि निरषि पुर-नरनारि। बसत तुलसी दास उर अवधेस के सुत चारि ॥३॥४१

नवीन स्याम मेघ सम स्याम श्रीराम अनुज औ अनेक शिशुन के संग अवध की गलिन में बिहरत हैं ॥ १ ॥ तरुण जो लालकमल तद्वत चरण हैं तामें सुवर्ण मयी पनही बनी है अर्थात् पहिरे हैं, पीतपट औ तरकस कटि में है, श्रेष्ठ करानि में सुंदर छोटे धनुष औ बान हैं ॥ २ ॥ लोचन इ० सु० ॥ ३ ॥ ४१ ॥ करतल सोहत बान धनुहिया। यह पद छेपक है ताते न लिखा

जैसे राम ललित तैसे लोने लषन लालु। तैसेई भरत सील सुषमा सनेहनिधि तैसेई सुभ प्रसंग सत्रुसालु ॥१॥ धरें धनु सर कर कसे कटि तरकसी पीरे पट वोढे चलैं चारु चालु। अंग अंग भूषन जराय के जगमगत हरत जन के जी को तिमिर जालु ॥२॥ षेलत चौहटा घाट बीथी बाटकनि प्रभु सिव सुप्रेम मानस मरालु। सोभा दान दैदै सनमानत जाचक जन करत लोक लोचन निहालु ॥ ३ ॥ रावन दुरित दुष दलै सुर कहै आजु अवध सकल सुष को सुकालु। तुलसी सराहै सिद्ध सुकृत कौसल्या जू के भूरिभाग भाजन भुआलु ॥ ४॥४२ ॥

ललित सुंदर, लोने सुंदर, सील सुखमा सनेह निधि सील औ परम सोभा औ स्नेह के समुद्र, शत्रुशालु शत्रुहन जी ॥ १ ॥ तरकसी तरकस जराय के जड़ाऊ के तिमिर जाल अंधकार समूह ।२॥ शिव जी के सुंदर प्रेम रूप मानस सर के हंस जो प्रभु हैं सो चौहटा औ घाट गली औ फुलवारिन में खेलत हैं औ लोक के लोचन रूप जाचक जन के सोभा दान दै दै के सनमानत हैं औ निहाल करत हैं ।३॥ देवता कहत हैं कि अवध में सकल सुख को सुकाल है पर रावन पाप रूप दुख को आजुए मारैं, भाव अवध के सुख में न भूलैं हमारे दुख को देखि शीघ्रता करैं वा देवता कहत हैं कि आजु कहैं या समै में रावन पाप रूप जो दुख है ताको मारैं तो अवध में सकल सुख को सुकाल होय। भाव फेर दुकाल का भै न रहि जाय। गोसाईं जी कहत हैं कि बड़े भाग्य के पात्र जो महाराज दशरथ औ कौशल्या जू तिन के सुकृत को सिद्ध सराहत हैं ।४।४२ ॥

राग ललित। ललित ललित लघु लघु धनु सर कर तैसि तरकसि कटि कसे पट पिअरे। ललित पनहि पांय पैंजनी किंकिनि धुनि सुनि सुष लहै मनु रहै नित निअरे ॥१॥

पहुंचो अंगद बाहु हृदय पदिक हारु कुंडल तिलक छबि गडी कबि जिअरे। सिर सिटे पारो लाल नीरज नयन बिसाल संदर बदन ठाढ़े सुरतरु सिअरे ॥ २ ॥ सुभग सकल अंग अनुज बालक संग देषि नर नारि रहै ज्यो कुरंग दिअरे। षेलत अवध षोरि गोली भौंरा चकडोरि मूरति मधुर बसै तुलसी के हिअरे ॥ ३ ॥४३॥

ललित० इ० सु० ॥ १ ॥ अंगद विजायठ पदिक धुकधुकी हार माला वा सात पदिक के माला का नाम पदिक हार है सिर सिटे पारे लाल शिर में लाल टोपी है नीरज कमल । सुरतरु सियरे कल्पवृक्ष के छाया में ॥ २ ॥ ज्यौं कुरंग दियरे जैसे मृगा दीपक को देखि कै। संका । मृगा तो गान सुनि मोहित होत है दीपक ते कैसे लिखे ? उत्तर। व्याधा दपिक बारि के कुछ गान करत हैं तब मृगा उहां आवत है यह प्रसिद्ध है चकडोरी चकई ॥ ३ ॥ ४३ ॥

छोटि ऐ धनुहिआ पनहिआ पगनि छोटो छोटि ऐ कछौटी कटि छोटि ऐ तरकसी। लसत झंगूली झीनी दामिनि की छबि छीनो सुंदर बदन सिर पगिआ जरकसी ॥ १॥ बय अनुहरत बिभूषन बिचित्र अंग जोहे जिय आवति सनेह की सरकसी। मूरति की सूरति कही न परे तुलसी पै जानै सोई जाके उर कसकै करकसी ॥ २॥४४ ॥

कछौटी कछनी ॥ १ ॥ अवस्था के अनुहार विचित्र भूषण अंग में हैं देखिबे तें जिय में स्नेह की प्रवलताई आवति है तुलसी पैं मूरति की सूरति नहीं काहि परै है जा के हृदय में कड़क ऐसी कसकै है अर्थात् मूरति सोई जानै ॥ २ ॥ ४४ ॥

राग टोड़ी — राम लषन एक ओर भरत रिपुदमन लाल एक ओर भए। सरजु तीर सम सुषद भूमिथल गनि गनि

गोड़आ बाँटि लये ॥ १ ॥ कंदुक केलि कुसल हय चढ़ि चढ़ि मन कस कसि ठोंकि ठोंकि षये। करकमलनि बिचित्र चौगानै षेलन लगे षेल रिझये ॥२॥ व्योम बिमाननि बिबुध बिलोकत षेलक पेषक छांहछये। सहित समाज सराहि दसरथहि बरषत निज तरु कुसुमचये ॥ ३ ॥ एक लै बढ़त एक फेरत सब प्रेम प्रमोद बिनोद मये। एक कहत भइ हाल राम जू की एक कहत भइया भरत जये ॥ ४ ॥ प्रभु बकसत गज बाजि बसन मनि जय धुनि गगन निसान हये। पाइ सषा सेवक जाचक भरिजीव न दूसरे द्वार गये ॥ ५ ॥ नभ पुर परति निछावरि जहँ तहँ सुरसिद्धनि बरदान दये। भूरिभाग अनुराग उमगि जे गावत सुनत चरित नित ये ॥६॥ हारे हरष होत हिय भरतहि जिते सकुचि सिर नयन नए। तुलसी सुमिरि सुभाव सील सुकृती तेइ जे एहि रंग रए॥४५

राम इ० सु० ॥ १ ॥ गेंदा के खेल में जे कुशल हैं ते घोड़न पर चढ़ि चढ़ि कै मन को ठोंकि ठोंकि मजबूत करि करि के खड़ भए ठोंकि ठोंकि मजबूत करिबे को यह भाव कि हम हारेंगे नहीं अवश्य जीतैंगे अस निश्चै करि करि वा मन को फेरि फेरि के अर्थात् मिलाप छोड़ि छोड़ि के ताल ठोंकि २ के खड़े भए वा मन भरि घोड़न को कसि कसि के याल ठोकि ठोकि के चढ़ि चढ़ि खड़े भए हस्त कमलन में बिचित्र दण्डा है रिझावनवाले खेल खेलन लगे यह खेल या भांति ते खेला जात है दूनो ओर गोइंया खडे होत हैं बीच में एक सींवां बनावत हैं जमीन में गेंदा को धरि घोड़े पर से दंडा मारि मारि के गेंदा को सींवा के ओर बढ़ावत हैं औ दूसर ओर से दंडा मारि मारि के गेंदा को फेरत हैं जेहि ओर से सींवा पार होय तेहि की हाल होय अर्थात् जीत होय ॥ २ ॥ आकाश तें बिमानन पर देवता देखत हैं खेलनेवाले और देखनेवालों की छाया छाय रही वा खेलनेवालों पर देखनेवालों की

छाया छाय रही वा खेलनेवालों की छाया सम देखनेवाले अर्थात् देवता छाजे समाजसहित राजा दशरथ को सराहि के अपना तरु जो कल्पवृक्ष ताको पुष्प समूहैं वर्षत भए ॥ ३ ॥ सब प्रेम अनन्द औ कौतुक मैं जे हैं तिन में से एक गेंदा कों लै बढ़त औ एक रोकि कै फेरत एक कहत है कि राम जू की जीत भई औ एक कहत है कि भैया भरत जीते ॥ ४ ॥ हये कहैं हने अर्थात् बजाए ॥५॥ जहं तहं पुर तें औ आकाश तें नेवछावरि परति है अर्थात् आकाश तें देवता औ पुर तें पुरवासी नेवछावर करत देवता औ सिद्ध वरदान देत भए अनुराग में उमगि के जे ए चरित नित्य सुनत गावत हैं तिन के बड़े भाग हैं ॥६॥ सिर नैन नए सिर औ नैन नीचे के नवावत भए रए कहैं रंगे ॥७॥४५॥

खेलि खेलि सुखेलनिहारे। उतरि उतरि चुचुकारि तुरंगनि सादर जाइ जाहारे ॥१॥ बंधु सखा सेवक सराहि सनमानि सनेह संभारे। दिए बसन गज बाजि साजि सुभ साजि सुभांति संवारे ॥२॥ मुदित नयन फल पाइ गाइ गुन सुर सानंद सिधारे। सहित समाज राज मंदिर कहं राम राउ पग धारे ॥ ३ ॥ भूपभवन घर घर घमंड कल्यान कोलाहल भारे। निरखि हरखि आरती निछावरि करत सरीर बिसारे ॥ ४ ॥ नित नये मंगल मोद अवध सब बिधि सब लोग सुखारे। तुलसी तिन्ह सम तेउ जिन्ह के प्रभु ते प्रभुचरित पियारे ॥ ५॥४६ ॥

सुंदर खेलनेवारे खेल खेलि के ॥ १ ॥ बंधु सखा सेवक कों सराहि सनमानि के फिरि सनेह को सम्हारे अर्थात् सनेह में आप जो बिहल है गए रहे ताको सम्हारे पुनि बसन औ घोड़ा हाथी साजि कै औ सुंदर भांति ते संवारे जे सुभ साज भाव सुंदर पोसाक ते दिए वा कल्यान साजि के सुंदर भांति ते संवारत भए औ बसनादि दिए वा सनेह सम्हारे यह सब दिए भाव जेहि की जेतनी प्रीति तेतनी दिए वा

सनेहको सम्हारे भए जो बंधु आदि हैं तिनकों सराहि सनमानि कै बसनादि दिए सनेह सम्हारे भए कहिवे को यह भाव कि सनेह को न सम्हारैं तो देहाध्यास रहित है जाहिं ॥२॥ मुदित इ० सु० ॥३॥ भूपति के भवन में औ घर घर में कल्यान को घमंड है अर्थात् कल्यान पूरि रहा है वा कल्यान को अहंकार है ॥ ४ ॥ गोसांई जी कहत हैं कि तिन्ह अवध वासी सम तेऊ हैं जिन्ह के प्रभु तें प्रभु का चरित पिआरा है ॥५॥४६॥

राग सारंग—चहत महामुनि जाग जयो। नीच निसाचर देत दुसह दुष क्रसतन ताप तयो ॥ १ ॥ सापे पाप नये निदरत षल तब यह मंत्र ठयो। बिप्र साधु सुर धेनु धरनि हित हरि अवतार लयो ॥२॥ सुमिरत श्रीसारंगपानि छन मै सब सोचु गयो। चले मुदित कौसिक कोसलपुर सगुननि साथ दयो ॥ ३ ॥ करत मनोरथ जात पुलकि प्रगटत आनंद नयो। तुलसी प्रभु अनुराग उमगि मग मंगलसुख भयो ॥ ४ ॥ ४७ ॥

महामुनि जे विश्वामित्र जू ते यज्ञ औ जय दोऊ चाहत हैं। महामुनि कहिवे को यह भाव कि तपबल याही देह भए क्षत्री ते ऋषिपति अस कोऊ मुनि नहीं भयो। नीच निसाचर दुःसहदुःख देत हैं ताते तन तापन ते तयो औ कृश भयो ॥ १ ॥ अब विश्वामित्र जू का विचार कहत हैं शाप देइवे में पाप है औ नवतई किए में खल निरादर करत है अस बिचारि कै तब यह मंत्र ठान्यो कि बिप्रादि के हित हरि अवतार लियो है इहां और नाम न कहे हरिहीं कहे ताको यह भाव कि या काल में अपना दुःख हराइवे पर दृष्टि है अर्थात् हरतीति हरिः ॥ २ ॥ सारंगपानि कहिवे को यह भाव कि सारंग अस धनुष हाथ में है तो क्यों न हमारे शत्रु को नाशैंगे। सगुनानि साथ दयो कहिवे को यह भाव कि राह भरि सगुन होत आयो ॥ ३ ॥ पुलकि करि कै मनोरथ करत जात हैं औ नयो जो कबहूं न भयो आनदं सो प्रगटत हैं गोसाईं जी

कहत हैं कि प्रभु अनुराग के उमग करि कै सग मंगलमूल भयो। भाव जबताई यज्ञ के ओर घर में लगे रहे तबताई न भयो औ प्रभु के ओर चलते राह में भयो आगे क्या जानै केतना होयगो ॥ ४ ॥ ४७ ॥

आजु सकल सुकृतफल पाइहौं। सुष की सीव अवधि आनद की अवध बिलोकिहौ जाइहौं ॥ १ ॥ सुतहि सहित दसरथहि देखिहौं प्रेम पुलकि उर लाइहौं । रामचन्द्रमुख चन्द्र सुधा छबि नयन चकोरनि प्याइहौं ॥ २ ॥ सादर समाचार नृप बूझिहै हौं सब कथा सुनाइहौं । तुलसी ह्वै कृत कृत्य आश्रमहि राम लषन लै आइहौं ॥ ३ ॥ ४८ ॥

अब विश्वामित्र जी को मनोरथ कहत हैं सुख की सीमा औ आनंद की सीमा ऐसी जो अयोध्या जी हैं तिन को जाय मैं देखिहौं ॥ १ ॥ श्रीरामचंद्र के मुख रूप चन्द्र को जो छबि रूप अमृत है ताको नैन रूप चकोरन को पिआइ हौं ॥ २ ॥ सादर इ० सु० दो० । वहुविधि करत मनोरथ, जात न लागी वार । करि मज्जन सरजू जल, गए भूप दरबार ॥ चौ० । मुनि आगमन सुना जब राजा । मिलन गएउ लै विप्र समाजा ॥ करि दंडवत मुनिहि सनमानी । निज आसन बैठारिन्हि आनी ॥ चरन पषारि कीन्ह अति पूजा । मोसम आजु धन्य नहिं दूजा ॥ विविधि भांति भोजन करवावा । मुनिवर हृदय हरष अतिपावा ॥ पुनि चरनन मेले सुत चारी । राम देषि मुनि देह बिसारी ॥ भये मगन देषत मुष सोभा । जनु चकोर पूरन शशि लोभा ॥ इहां यतनी कथा छोड़ि दिए प्रसंग मिलाइबे हेतु हम लिखि दिया ॥ ३ ॥ ४८ ॥

राग नट—देषि मुनि रावरे पद आजु । भयो प्रथम गनती मैं अब तहां जहां लौ साधु समाजु ॥ १ ॥ चरन बंदि करजोरि निहोरत कहिय कृपा करि काजु । मेरे कछु न अदेय राम बिनु देह गेह सब राजु ॥ २ ॥ भली कही भूपति त्रिभुअन मै को सुकृती सिरताजु । तुलसी राम जनम ते जनिअत सकल सुकृत को साजु ॥ ३ ॥ ४९ ॥

देखि इ० पद सुगम ॥ ३ ॥ ४९ ॥

राजन रामलषन जौ दीजै। जस रावरो लाभ ढोटनिहु मुनि सनाथ सब कीजै ॥ १ ॥ डरपत हौ सांचेहु सनेहबस सुत प्रभाव बिनु जाने। बूझिये बामदेव अरु कुलगुरु तुम पुनि परम सयाने ॥ २ ॥ रिपुरन दलि मष राषि कुसल अति अलप दिननि घर ऐहैं। तुलसिदास रघुबंसतिलक की कबि कुल कीरति गैहैं ॥ ३ ॥ ५० ॥

राजन इ० पद सुगम ॥ ३ ॥ ५० ॥

रहे ठगि से नृपति सुनि मुनिबर के बैन। कहि न सकत कछु राम प्रेमबस पुलकगात भरे नीर नैन॥१॥ गुरु बसिष्ट समुझाय कह्यौ तब हिय हरषाने जाने सिषसयन। सौंपे सुत गहि पानि पांय परि भूसुर उर चले उमगि चयन ॥ २ ॥ तुलसी प्रभु जोहत पोहत चित सोहत मोहत कोटि मयन। मधुमाधव मूरति दोउ संग मानो दिनमनि गमन कियो उत्तर अयन ॥ ३ ॥ ५१ ॥

रहे ठगि सु० ॥ १ ॥ विश्वामित्र जू चैन कहैं आनन्द में उमगि चले ॥ २ ॥ गोसांई जी कहत हैं कि कोटि काम के मोहत जो प्रभु सोभत हैं सो देखत मात्र चित्त कों पोहि लेत हैं अर्थात् अपने में लगाइ लेत हैं मानो चैत्र बैसाख रूप दोउ मूरति संग लै विश्वामित्ररूप सूर्य उत्तर दिसा को गवन कियो भाव चैत्र बैसाख पाय सूर्य अति प्रतापयुक्त होत हैं तैसे इन दोऊ भैयन को पाय विश्वामित्र जू भए ॥३॥५१॥

राग सारंग। रिषि संग हरषि चले दोउ भाई। पितु पद बंदि सीस लियो आयसु सुनि सिष आसिष पाई ॥१॥ नील पीत पाथोज बरन बपुबयकिसोर बनि आई। सर धनु पानि पीत पट कटितट कसे निषंग बनाई ॥ २ ॥ कलित कंठ

मनिमाल कलेवर चंदन खौरि सुहाई। सुंदर बदन सरोरुह लोचन मुख छबि बरनि न जाई ॥ ३ ॥ पल्लव पंख सुमन सिर सोहत क्यौं कहौं वेष लोनाई। मनो मूरति धरि उभय भाग भई त्रिभुअन सुंदरताई ॥ ४ ॥ पैठत सरनि सिलनि चढ़ि चितवत खगमृग बन रुचिराई। सादर सभय सप्रेम पुलकि मुनि पुनि पुनि लेत बोलाई ॥ ५ ॥ एक तीर तकि हती ताडका विद्या बिप्र पढाई। राख्यौ जज्ञ जीति रजनीचर भइ जग बिदित बड़ाई ॥ ६ ॥ चरन कमल रज परसि अहल्या निज पति लोक पठाई। तुलसिदास प्रभु के बूझे मुनि सुरसरि कथा सुनाई ॥ ७ ॥ ५२ ॥

पिताकी शिक्षा सुनि आज्ञा शिर धरि लिए फिर पद कों बंदि आशिष पाइ कै ऋषि के संग हरषि कै दोऊ भाई चले ॥१॥ श्याम पीत कमल के समान सरीर के बर्ण हैं औ किशोर अवस्था बनि के आई अर्थात् भली भांति आई है बान धनुष हाथ में है औ कटि देश में पीत पट है औ तामें तरकस बनाय कै कसे हैं ॥२॥ कंठ में मणिमाल शोभित है औ सरीर में सुंदर चंदन की खौरि है सुंदर मुख औ कमल सम लोचन हैं मुख की छबि बरनी नहीं जाति है ॥३॥ अपर पद सु० ॥४॥५॥६॥७॥५२॥

राग नट। दोऊ राजसुवन राजत मुनि के संग। नख सिख लोने लोने बदन लोने लोयन दामिनि वारिदबर बरन अंग ॥ १ ॥ सिरसि सिखा सुहाई उपबीत पीत पट धनु सर करकसे कटि निषंग। मानो मख रूज निसिचर हरिबे को सुत पावक के साथ पठये पतंग ॥ २ ॥ करत छाँह घन बरषै सुर सुमन छबि बरनत अतुलित अनंग। तुलसी प्रभु बिलोकि मग लोग खग मृग प्रेम मगन रंगे रूप रंग ॥ ३॥५३ ॥

लोने सुंदर लोयन नेत्र दामिनि बरण अंग श्रीलक्ष्मण जी को औ मेघबरण अंग श्री राम जी को है ॥ १ ॥ मानो मख के रोग रूप निशाचर हरिवे को अग्नि के साथ पुत्र जो अश्वनी कुमार तिन को सूर्य पठए हैं इहां पावक विश्वामित्र जू हैं अश्वनी कुमार रूप दोऊ भाई हैं सूर्य चक्रवर्त्ती महाराज हैं ॥ २ ॥ मेघ छांह करत हैं देवता फूल बर्षतहैं औ अनेक अनंग सम छवि बरनतहैं वा छवि बरनते में काम नहीं तुलित होत है वा अतुलित जो छवि ताको काम बरनत है ॥३॥५३॥

राग कल्यान। मुनि के संग विराजत बीर। काकपक्ष-धर कर कोदंड सर सुभग पीत पट कटि तूनीर ॥१॥ बदन इंदु अंभोरुह लोचन स्याम गौर सोभा सदन सरीर। पुलकत रिषि अवलोकि अमित छवि उर न समात प्रेम को भीर ॥२॥ खेलत चलत करत मग कौतुक बिलमत सरित सरोवर तीर। तोरत लता सुमन सरसीरुह पियत सुधासम सीतल नीर॥३ बैठत बिमल सिलनि बिटपनि तर पुनि पुनि बरनत छांह समीर। देषत नटत केकि कल गावत मधुप मराल कोकिला कीर ॥ ४ ॥ नयननि को फल लेत निरषि मृग षग सुरभी व्रजबधू अहीर। तुलसी प्रभुहि देत सब आसन निज निज मन मृदु कमल कुटीर ॥ ५ ॥ ५४ ॥

काक पक्ष जुलुफ कोदंड धनुष तूनीर तरकस ॥ १ ॥ इंदु चंद्रमा अंभोरुह कमल ॥ २ ॥ सरसीरुह कमल ॥ ३ ॥ नाचत जो मोर हैं औ सुंदर गावत जो भ्रमर हैं औ हंस कोकिल सुआ जे हैं तिन को देखत हैं ॥ ४ ॥ मृग पक्षी गौ औ परिकन के रहैवाली जो स्त्री औ अहीर नयननि को फल लेत हैं गोसाई जी कहत हैं कि सब प्रभु को अपने अपने मन रूप कुटी में कोमल कमल को आसन देत हैं भाव अवर आसन को कठोर जानि अस भावना करत हैं ॥ ५ ॥ ५४ ॥

राग कान्हरा—सोहत मग मुनि संग दोउ भाई। तरुन

तमाल चारु चंपक छबि कवि सुभाय कहि जाई ॥ १ ॥ भूषन बसन अनुहरति अंगनि उमगति सुंदरताई । बदन मनोज सरोज लोचननि रही है लोभाइ लोनाई ॥ २ ॥ अंसनि धनु सर करकमलनि कटि कसि हैं निषंग बनाई । सकल भुवन सोभा सरबस लघु लागत निरखि निकाई ॥ ३ ॥ महि मृदु पथ घनछांह सुमन सुर बरषि पवन सुषदाई । जल-थलरुह फल फूल सलिल सब करत प्रेम पहुनाई ॥ ४ ॥ सकुच सभीत बिनीत साथ गुरु बोलनि चलनि सुहाई । षग मृग बिचित्र बिलोकत बिच बिच लसत ललित लरि-काई ॥ ५ ॥ बिद्या दई जानि बिद्यानिधि बिद्यहु लही बडाई । ख्याल दली ताडका देषि रिषि देत असीस अघाई ॥६॥ बूझत प्रभु सुरसरि प्रसंग कहि निज कुल कथा सुनाई । गाधिसुअन सनेह सुष सम्प्रति उरआस्रम न समाई ॥ ७ ॥ बन बासी बड जती जोगि जन साधु सिद्धि समुदाई । पूजत पेषि प्रीति पुलकत तन नयनलाभ लुटि पाई ॥ ८ ॥ मष राष्यौ बलदल दलि भुजबल बाजत बिबुध बधाई । नित पथचरितसहित तुलसोचित बसत लषन रघुराई ॥९॥५५॥

सुंदर तरुण तमाल के वृक्ष सम श्रीरघुनाथ की औ चंपक सम श्रीलक्ष्मण की छबि यह कबि सुभाव ते कहि जात है । कबिसुभाव कहिवे को यह भाव कि प्रायः जो न घटै सो घटावना । कबिन का सुभाव होत है ॥ १ ॥ अंगनि के अनुरूप भूषन बसन है अर्थात् श्रीरामजी को पीत बसन औ पीत मणि आदि को भूषन है औ श्रीलक्ष्मणजी कों नीलबसन औ नीलमणि आदि को भूषण है औ सुंदर-ताई उमगति है औ मुखन पर काम की नैनन पर कमलन की शोभा लोभाय रही हैं ॥ २ ॥ अंसन कहैं कांधन पर सरवस कहैं सब ॥ ३ ॥

पृथ्वी कोमल पथ से, मेघ छाया से, देवता फूल बराषि कै, पवन सुखदाई से अर्थात् शीतल मंद सुगंध बहि के जल के वृक्ष स्थल के वृक्ष फल फूल से औ सलिल सब से अर्थात् आत्मनिवेदन से प्रेमपूर्वक पहुनाई करत हैं ॥ ४ ॥ गुरु के साथ में सकुचता सभीतता औ नम्रता युक्त बोलनि औ चलनि सोहाति है औ विचित्र पक्षी मृग जो देखत हैं सो बीच बीच में सुंदर लरिकाई लसत है ॥५॥ खेलही में ताड़का को दली ताको देखि कै ऋषि अघाय के असीस देत भए औ विद्यानिधि जानि विद्या दई भाव विद्यन के रहिबे को स्थान एही हैं विद्या ने भी बड़ाई लही भाव विद्यानिधि जो सोऊ हम को सीखे यह बड़ाई लही पहिले ताड़का का बध है फिर बिश्वामित्र का विद्या देना है ताते पद का यहि भांति अन्वय किया ॥ ६ ॥ प्रभु गंगा जी की कथा बूझत भए ताको कहि के विश्वामित्र जू अपने कुल की कथा सुनाई । बालकाण्ड बाल्मीकीय रामायण में विश्वामित्र के कुल की कथा लिखी है विस्तर भय तें इहां नहीं लिखा विश्वामित्र जी को जो सनेह औ सुख रूप सम्पत्ति है सो हृदय रूप आश्रम में नहीं समाति है ॥ ७ ॥ बानप्रस्थ ब्रह्मचारी औ संन्यासी और अष्टांग योग साधनवारे जे जन औ साधु अर्थात् परकाज साधन करनिहारे औ सिद्ध अर्थात् जो साधन करि चुके हैं तिन की समुदाय देखि के पूजत हैं औ प्रीति तें तन पुलकत हैं औ नैनन ने लाभ की लूटि पाई है ॥ ८ ॥ बाजत बिबुध बधाई देवतन की बधाई बाजत है ॥ ९॥५५ ॥

मंजुल मंगलमय नृपढोटा । मुनि मुनितिय मुनिसिसु बिलोकि कहै मधुर मनोहर जोटा ॥ १ ॥ नाम रूप अनुरूप बेष बय राम लषनलाल लोने । द्वन्द्व तें लही है मानो घन दामिनि दुति मनसिज मरकत सोने ॥ २ ॥ चरन सरोज पीत पट कटि तट तून तीर धनु धारी । केहरि कंध काम करिकरबर बिपुल बाहुबल भारी ॥ ३ ॥ दूषनरहित समय सम भूषन पाइ सुअंगनि सोहै । नवराजीव नयन

पूरनबिधु बदन मदन मन मोहै ॥ ४ ॥ सिरनि सिषंड सुमन दल मंडन बाल सुभाय बनाये। केलि अंक तनु रेनु पंक जनु प्रगटत चरित चुराये ॥ ५ ॥ मख राखिबे लागि दसरथ सो मागि आश्रमहि आने। प्रेम पूजि पाहुने प्रानप्रिय गाधिसुअन सनमाने ॥ ६ ॥ साधन फलसाधक सिद्धनि के लोचनफल सबही के। सकल सुकृतफल मातु पिता के जीवन धन तुलसी के ॥ ७॥५६ ॥

सुंदर मंगल मय नृपबालक हैं, मंजुल मंगल कहिबे को यह भाव कि जेहि के नाम लेवे ते अमंगल नशि जात है, मुनि औ मुनि की पत्नी औ मुनि के बालक कोमल मनोहर जोड़ी देखि कै कहत हैं ॥ १ ॥ नाम औ रूप योग्य वेष औ अवस्था से श्रीराम लषन अति लोने हैं मानो मेघ दामिनि काम मरकत मणि औ सोना ने इनहीं तें छवि लही है ॥ २ ॥ कमल सम चरण है कटिदेश में पीतपट औ तरकस औ बान धनु धारन किए हैं। सिंघ सम कांध हैं, काम रूप हाथी के श्रेष्ठ सुंड सम बिशाल भुजा औ पराक्रम भारी है ॥३॥ दूषनरहित जे समय सब भूषण ते सुअंगनि पाय सोभत हैं। दूषणरहित कहिबे को यह भाव कि बहुत मणि दोष सहितो होत हैं। नवीन कमल सम नेत्र हैं पूर्णचंद्र सम मुख है सो मदन को मन मोहत है ॥ ४ ॥ शिर पर मोरपंख औ फूल दल को भूषण बाल सुभाय ते बनाए हैं। खेल के चिन्ह जो तनु में रेनु औ पंक सो मानहु चोराए चरित को प्रगटत है भाव विश्वामित्र जी को जो आंख बचाय कै खेले कूदे हैं ताकों प्रगटत हैं ॥५॥ विश्वा-मित्र जू यज्ञ राखिबे के हेतु चक्रवर्ती महाराज सों मांगि के आश्रम में ले आए प्रान ते प्रिय जो पाहुन दोऊ भाई तिन्ह कों प्रेम ते पूजि कै सन्मानत भए ॥६॥ साधन इ० सु० ॥७॥ ॥ ५६ ॥

राग सूहब । रामपद पदुम पराग परी । रिषितिय त्यागि तुरत पाहनतन छबिमय देह धरी ॥ १ ॥ प्रबल पाप पतिसाप दुसह दव दारुन जरनि जरी। कृपा सुधा सींची

बिबुध बेलिं ज्यौं फिरि सुध फरनि फरी ॥ २ ॥ निगम अगम मूरति महेस मति युवति बराय वरी । सोइ मूरति भइ जानि नयनपथ एक टक ते न टरी ॥ ३ ॥ बरनत हृदय सरूप सील गुन प्रेम प्रमोद भरी । तुलसिदास ऐसे केहि आरत की आरति प्रभु न हरी ॥ ४॥५७ ॥

पराग धूरि पाहन पाखान ॥ १ ॥ प्रबल पाप से जो पतिशापरूप दुःसह अग्नि तेहि करि कठिन जरनि से जो जरी रही सो कृपारूपी अमृत से सींची गई फेरि कल्पलता के समान सुखरूप फरनि से फरी । पाद्मे-"गच्छतस्तस्य रामस्य पादस्पर्शान्महाशिला । काचिद्योषाऽभवत्सद्योविस्मितं मुनिरब्रवीत् ॥ शापदग्धा पुरा भर्त्रा राम शक्रापराधतः । अहल्याख्या शिला जज्ञे शतलिंगीकृतः स्वराट् ॥ त्वदंघ्रिस्पर्शनात्तस्यै शापान्तं प्राह गोतमः तस्मादियं ते पादाब्जस्पर्शाच्छुद्धाऽभवत्प्रभो'' ॥२॥ जो मूरति वेद को अगम अर्थात् वरनन में औ महेश की मतिरूप युवती ने चुनि कै बरी है बराय वरी कहिबे को यह भाव कि विष्णु नृसिंह बामनादि को तजि कै बरी सोई मूरति नयन गोचर भई जानि एक टक ते न टरी ॥३॥ रूप शील गुण के हृदयमें बरनत मात्र प्रेम औ आनंद से भरत भई। गोसाँई जी कहत हैं कि प्रभु यहि प्रकार ते केहि आरत की आरति नहीं हरी है। भाव सब की हरी हैं ॥४॥ ५७ ॥

परत पद पंकज रिषिरवनी । भई है प्रगट अतिदिव्य देह धरि मानो त्रिभुवन छबिछवनी ॥१॥ देखि बडी आचरज पुलकि तन कहत मुदित मुनिभवनी । जौ चलि है रघुनाथ पयादे सिला न रहि है अवनी ॥ २ ॥ परसि जो पाय पुनीत सुरसरी सोहै तीनि पथ गवनी । तुलसिदास तेहि चरन रेनु की महिमा कहै मति कवनी ॥ ३ ॥ ५८ ॥

छवनी कन्या ॥ १ ॥ मुनिभवनी मुनिपत्नी ॥ २ ॥ तीनि पथ स्वर्ग मर्त्य पाताल लोक ॥ ३ ॥ ५८ ॥

भूरि भाग भाजन भई। रूपरासि अवलोकि बंधु दोउ प्रेम सुरंग रई॥ १॥ कहा कहै केहि भांति सराहै नहि करतूति नई। बिनु कारन करुनाकर रघुबर केहि केहि गति न दई॥ २॥ करि बहु बिनय राखि उर मूरति मंगल मोद मई। तुलसी ह्वै बिसोक पतिलोकहि प्रभुगुन गनत गई॥ ३॥ ५९॥

भाजन पात्र, सुरंग रई सुंदर रंग में रंगी॥ १॥ बिनु कारन बिनु हेतु॥ २॥ करि इ० सु०॥ ३॥ ५९॥

राग कान्हरा—कौसिक के मख के रखवारे। नाम राम अरु लखन ललित अति दसरथराज दुलारे॥ १॥ मेचक पीत कमल कोमल कल काकपक्षधरवारे। सोभा सकल सकेलि मदन बिधि सुकर सरोज संवारे॥ २॥ सहस समूह सुबाहु सरिस खल समर सूर भटभारे। केलि तून धनु बान पानि रन निदरि निसाचर मारे॥ ३॥ रिषितिय तारि स्वयंबर पेखन जनक नगर पगधारे। मग नर नारि निहारत सादर कहि बड़भाग हमारे॥४॥ तुलसी सुनत एक एकनि सो चलत बिलोकनिहारे। मूकनि बचन लाहु मानो अंधनि लहे हैं बिलोचन तारे॥ ५॥ ६०॥

अब मग के नर नारिन की उक्ति लिखत हैं कौशिक इ० सु०॥१॥ ए बालक श्याम पीत कोमल कमल सम हैं औ सुंदर जुल्फ धारन किए हैं मानो सकल शोभा समेटि के काम रूप बिधाता ने अपने कर कमल से संवारे हैं, इहां लुप्तोत्प्रेक्षा है॥ २॥ समर में सूर बड़े योद्धा सुबाहु सरिस खल अनेक सहस्र निशाचरन को खेलवाड़ के तरकस औ धनुष बान जो हाथ में है ताही सो रण में निरादर करि कै मारे॥३॥ पेखन कहैं देखन॥ ४॥ मानो मूकनि ने वचन लाभ औ अंधनि ने नेत्रन की पुतरी लहे हैं॥ ५॥ ६०॥

राग टोड़ी—आए सुनि कौसिकु जनकु हरषाने हैं। बोलि गुरु भूसुर समाज सो मिलन चले जानि बडे भाग अनुराग अकुलाने हैं॥ १ ॥ नाइ सीस पगनि असीस पाइ प्रमुदित पांवडे अरघ देत आदर सो आने हैं। असन बसन बास कै सुपास सब बिधि पूजि प्रिय पाहुने सुभाय सनमाने हैं॥ २ ॥ बिनय बडाई रिषि राजऊ परस्पर करत पुलकि प्रेम आनद अघाने हैं। देषे राम लषन निमिष बिथकित भइ प्रानहु ते प्यारे लागे बिनु पहिचाने हैं॥ ३ ॥ ब्रह्मानंद हृदय दरस सुष लोयननि अनुभए उभय सरस राम जाने हैं। तुलसी बिदेह की सनेह की दसा सुमिरि मेरे मनमाने राउ निपट सयाने हैं॥ ४ ॥ ६१ ॥

कौशिक को आगमन सुनि अपने बड़े भाग जानि अनुराग से विह्वल भए हैं औ हरषाने हैं जे जनक महाराज सचिव आदि तिन के सहित मिलिबे को चले। शंका। गुरु को कैसे बोलाए? उत्तर। श्रीजनक महाराज के गुरु जागवल्क जी हैं सतानंद जी पुरोहित हैं पुरोहित को भी गुरु कहत हैं॥ १ ॥ प्रिय पाहुने बिश्वामित्र जी ॥ २ ॥ विनय इ० सु० ॥ ३ ॥ ब्रह्मानंद उर से औ रामदरसन सुख नेत्रन तें दूनों अनुभव किए। तब सरस राम हैं यह जाने अर्थात् नेत्रसुख को अधिक माने। गोसांई जी कहत हैं विदेह के स्नेह की दसा सुमिरि कै हमारे मन ने मान लिया कि महाराज अत्यंत चतुर हैं भाव ज्ञान में न भूले। "श्रेयः श्रुतिं भक्तिमुदस्य ते विभो क्लिश्यन्ति ये केवलबोधलब्धये। तेषामसौ केवलएवशिष्यते नान्यद्यथास्थूलतुषावघातिनाम्" ॥ ४॥६१ ॥

राग मलार—कोसल राय के कुंअरोटा। राजत रुचिर जनकपुर पैठत स्याम गौर नीके जोटा ॥१॥ चौतनी सिरनि कनककलि काननि कटि पट पीत सोहाए। उर मनिमाल बिसाल बिलोचन सीय स्वयंबर आए ॥ २ ॥ बरनि न जात

मनहि मन भावत सुभग अबहि बय थोरी। भइ है मगन बिधु बदन बिलोकत बनिता चतुर चकोरी ॥ ३ ॥ कहूं सिवचाप लरिकबनि बूझत बिहंसि चितै तिरछो हैं। तुलसी गलिन भीर दरसन लगि लोग अटनि अवरोहैं ॥ ४ ॥ ६२ ॥

कुअरौटा कहैं कुअरे जोटा जोड़ी ॥ १ ॥ चौतनी टोपी कनककली सोना को कलिकाकार कुंडल वा पीत रंग के पुष्प की कली कान पर खोसे हैं ॥ २ ॥ बरनि इ० सु० ॥ ३ ॥ अटनि अवरो है अटारिन पर चढ़े हैं ॥ ४ ॥ ६२ ॥

ए अवधेस के सुत दोऊ। चढि मंदिरनि बिलोकति सादर जनकनगर सब कोउ ॥ १ ॥ स्याम गौर सुंदर किसोर तन तून बान धनु धारी। कटि पट पीत कंठ मुकुतामनि भुज बिसाल बल भारी ॥२॥ मुष मयंक सरसीरुह लोचन तिलक भाल टेढी भौंहैं। कल कुंडल चौतनी चारु अति चलत मत्त गज गौहैं ॥३॥ बिस्वामित्र हेतु पठए नृप इन्हहि ताडिका मारी। मष राख्यौ रिपु जीति जानि जग मग मुनिबधू उधारी ॥ ४ ॥ प्रिय पाहुने जानि नर नारिन्ह नयनन्हि अयन दये। तुलसिदास प्रभु देषि लोग सब जनक समान भये ॥५॥६३

गजगौहैं गज गति से, अयन गृह, जनक समान भए बिदेह भए, अपर पद सुगम ॥ ५ ॥ ६३ ॥

राग टोड़ी—बूझत जनकनाथ ढोटा दोउ काके हैं। तरुन तमाल चारु चंपक बरन तनु कौने बडभागी के सुकृत परिपाके हैं ॥१॥ सुष के निधान पाये हिय के पिधान लाये ठग कैसे लाडू षाये प्रेम मधु छाके हैं। स्वारथरहित पर-मारथी कहावत हैं भे सनेहबिवस बिदेहता बिवाके हैं ॥२॥

सील सुधा के अगार सुषमा के पारावार पावत न पर पार पैरि पैरि थाके हैं। लोचन ललकि लागी मन अति अनुरागी एकरस रूप चित्त सकल सभाके हैं ॥ ३ ॥ जिय जिय जोरत सगाई राम लषन सो आपने आपने भाय जैसे भाय जाके हैं। प्रीति को प्रतीति को सुमिरबे को सेइबे को सरन को समरथ तुलसीहु ताके हैं ॥ ४ ॥ ६४ ॥

जनक महाराज बूझत हैं कि हे नाथ ए दोउ बालक केहि के हैं। ए जे नूतन तमाल औ सुंदर चंपा के बरन सम शरीर ते कौने बड़े भागी के सुकृत के फल हैं ॥ १ ॥ अब कवि की उक्ति है सुख के रासि पाए हृदय को पिधान कहैं ढपना लगावत भए भाव जब कोऊ धन पावत है तब गुप्त ठौर में तोपि कै धरत है, इहां गुप्त ठौर हृदय है, ताको पिधान देहाध्यास भूलना है, ठग के लड़ुआ अस खात भए अर्थात् बिख डारि कै लड़ुआ ठग खवावत हैं, तब खवइआ अचेत ह्वै जात है तस भए औ प्रेम रूपी मदिरा में छकि गए हैं। कहावत तो रहे स्वारथरहित परमारथी पर सनेह के विशेष बस भए तें विदेहता रहित ह्वै गए हैं। भाव सनेहविवस भए तातें स्वारथसहित औ विदेहता विना के ताते परमारथ रहित। इहां गोसांई जी यह जनाए कि परमार्थी के फल रूप राम है ॥ २ ॥ सकल सभा के एक रस रूप में चित्त हैं तातें लोचन ललकि के लागे औ मन अति अनुरागे ते लोचन मन शील रूप अमृत के गृह परम शोभा के समुद्र को पैरि पैरि थाके हैं पर पार नाहीं पावत है। शील सुधा के अगार कहिबे को यह भाव कि समुद्र सुधा को भवन है। औ यह परम शोभा रूप समुद्र शील रूप अमृत को भवन हैं। थाके हैं कहिबे को यह भाव कि अघाते नहीं हैं पारावार समुद्र का नाम है। "समुद्रोब्धिरकूपारः पारावारः सरित्पतिः" जाके जैसे जैसे भाव हैं तेहि भाव के अनुकूल अपने अपने जिय में राम लषन सो नाता जोरत है। प्रीति कहिबे को विश्वास करिबे को सुमिरिबे को सेवन करिबे को औ सरन जाइबे को योग्य जो ताको तुलसिहु ने ताके हैं ॥ ४ ॥ ६४ ॥

राग मलार—ए कौन कहां ते आए। नील पीत पाथोज बरन मनहरन सुभाय सुहाये ॥ १ ॥ मुनिसुत किधौं भूप-बालक किधौं ब्रह्म जीव जग जाए। रूप जलधि के रतन सुछबि तिय लोचन ललित लल्लाये ॥ २ ॥ किधौं रविसुअन मदन रितुपति किधौं हरिहर वेष बनाए। किधौं आपने सुकृत सुरतरु के सुफल रावरेहि पाये ॥ ३ ॥ भए बिदेह बिदेह नेहबस देहदसा बिसराए। पुलकगात न समात हरष हिय सलिल सुलोचन छाए ॥ ४ ॥ जनकवचन मृदु मंजु मधुर भरे भगति कौसिकहि भाये। तुलसी अति आनंद उमगि उर राम लषन गुन गाये ॥ ५ ॥ ६५ ॥

श्यामपीत कमल सम बरन औ मन के हरनिहारे स्वाभाविक सुंदर जे ए ते कौन हैं औ कहां ते आए हैं ॥ १ ॥ कैधौं मुनिसुत हैं कैधौं राजा के बालक हैं। इहां मुनि के संग ते मुनिपुत्र का संदेह औ राज-कुमार सम देखि राजपुत्र का संदेह वा विश्वामित्र जी के कोई पहिले के संबंधी तो नहीं हैं याते क्षत्री का संदेह कदापि अब के सम्बन्धी होहिं याते ब्राह्मण का संदेह है कैधौं जीव औ जगत को जो उत्पन्न किए जे सोई ब्रह्म हैं। मानसरामायन में स्पष्ट करि लिखा। ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा। उभय बेष धरि की सोइ आवा॥ इहां अत्यंत शांत औ चमत्कार देखि ब्रह्म कहे। कोऊ अस अर्थ करत हैं कैधौं ब्रह्म जीव ही तो नहीं जगत में जन्मे हैं कैधौं रूप रूपी समुद्र के मणि हैं कैधौं ए लला सुंदर छवि रूप तिय के सुंदर लोचन हैं ॥ २ ॥ कैधौं रविसुअन कहैं हंस हैं, काऊ अस कहत कैधौं रविसुअन कहैं अश्वनी-कुमार सो तो नहीं हैं, कैधौं काम बसंत हैं रूप जलधि के रतन इहां से औ मदन रितुपति किधौं इहां लो अत्यंत रूप देखि संदेह है। कैधौं वेष बनाए भए हरि हर तो नहीं हैं। इहां अति तेजस्वी देखि हरि हर का संदेह है, कैधौं अपने सुकृत रूप कल्पवृक्ष के सुंदर फल आप ही ने

पाए हैं अर्थात् दोऊ भाइन के इहां विश्वामित्र जी को सर्वोत्कृष्ट तपस्वी जानि तप के फल रूप में संदेह है ॥ ३ । नेहबस देहदसा को बिसराए ताते बिदेह महाराज विदेह भए । इहां भए विदेह बिदेह कहिवे को यह भाव कि अबताई नाम मात्र रहा है सांचे विदेह आज भए हैं वा अब ताई जगत में विदेह रहे अब ब्रह्मानन्द हूंते बिदेह भए । इहां स्वरूपानन्द की बड़ाई जानना, पुलकावली अंग में है, हृदै में हरष नहीं समात है औ नेतन ने आंसू छाए भाव जब हर्ष हृदय में न समायो तब नैन के राह बाहर भयो ॥ ४ ॥ जनक जी के सुंदर कोमल औ मीठे औ भगति भरे वचन कौशिक को भाए । गोसाईं जी कहत हैं अति आनंद जो सो हृदय ते उमगि के श्री राम लषन के गुन गावत भए अर्थात् जनक महाराज से सब कहि देत भए ॥ ५ । ६५ ॥

कौसिक कृपाल हू को पुलकित तनु भो । उमगत अनुराग सभा के सराहे भाग देषि दसा जनक की कहिवे को मनु भो ॥ १ ॥ प्रीति के न पातकी दिए हू साप पाप बडो मष मिसि मेरो तब अवध गवनु भो । प्रानहू ते प्यारे सुत मागी दिये दसरथ सत्यसंध सोच सहै सूनो सो भवनु भो ॥२॥ काकसिषा सिरकर केलितूनु धनुसर बालक बिनोद जातुधाननि सो रनु भो । बूझत बिदेह अनुराग आचरज बस रिषिराज जाग भयो महाराज अनुभो ॥३॥ भूमि देव नरदेव सचिव परस्पर कहत हम को सुरतरु शिवधनु भो । सुनत राजाकी रीति उपजी प्रतीति प्रीति भाग तुलसी के भले साहेब को जनु भो ॥ ४ ॥ ६६ ॥

कृपाल जो विश्वामित्र तिन हू को तन रोमांच युक्त भयो अनुराग उमगत संते सभा के भाग सराहे औ जनक जी की दशा देखि कै वृत्तान्त कहिवे को मनु भो ॥ १ ॥ अब वृत्तान्त कहत हैं पातकी जे राक्षस ते प्रीति के नहीं है औ शाप दिए हू में बड़ो पाप हैं तब मख के

बहाने से मेरो अवध में गमन भयो। भवन सूनो सो भयो शोच सहे पर सत्यप्रतिज्ञ जे दशरथ महाराज ते प्रान हू ते प्यारे सुत मांगिबे ते दिए॥२ शिर बिखे जुल्फ मात्र है अर्थात् कूंड़ी आदि नहीं तरकस औ हाथ में जे धनु बान ते खेलवाड़ के हैं। भाव युद्ध के नहीं औ बालविनोद से अर्थात् रोष से नहीं औ युद्ध निशाचरन के नायकन में भयो, भाव साधारन से नहीं। "जातूनिरक्षांसि दधातिपुष्मातीति जातुधानः। राक्षस नायक इत्यर्थः॥ अनुराग औ आश्चर्य के बस है विदेह महाराज बूझत हैं कि हे ऋषिराज यग्य भयो तब विश्वामित्र जू बोले कि हे महाराज अनुभो अर्थात् सम्यक् भयो वा महाराज अनुभो हे महाराज आप ही अनुभव करिए जौ यग्य न पूर्ण होता तो हम आनंदपूर्वक इहां कैसे आवते॥ ३॥ सुनत मात्र रघुनाथ में राजा की रीति उपजी भाव निश्चय भयो कि राजकुमार हैं ताते उपजी औ प्रीति प्रतीति उपजी भाव ऐसे राक्षसन के मारे हैं तो क्यों न धनु तोरैंगे औ ब्राह्मण राजा मंत्री परस्पर कहते हैं कि हम को शिवधनु कल्पवृक्ष भयो भाव यही शिवधनु के प्रसाद से यह दर्शन पाए। राजा की रीति कहे व्यवहार सुनत मात्र प्रतीति औ प्रीति उपजी कि भाग तुलसी के हैं कि भले साहेब को गुलाम भयो। भाव जेहि साहब के पाए ते ब्रह्मज्ञ जे जनक महाराज तेऊ अपने को कृतार्थ माने॥ ५॥ ६६॥

चार्यौ भले बेटा देव दसरथ राय के। जैसे राम लषन भरत रिपुहन तैसे सील सोभा सागर प्रभाकर प्रभाय के॥१॥ ताडका संघारि मष राषि नीके पालि ब्रत कोटि कोटि भट किए एक घाय के। एक बान बेगही उडाने जातुधान जात सूषि गए गात है पतउआ भये बाय के॥ २॥ सिला छोर छुवत अहल्या भई दिव्य देह गुन पेषि पारस के पंकरुह पाय के। राम के प्रसाद गुरु गौतम षसमु भये रावरेहु सतानंद पूत भये माय के॥ ३॥ प्रेम परिहास पोषे बचन परस्पर कहत सुनत सुष सबही सुभाय के। तुलसी सराहे भाग

कौसिक जनक जू की विधि की सुढर होत सुढर सुदाय की।४।६७

हे देव हे महाराज राजा दशरथ के चारो बेटा भले हैं जैसे राम लषन तैसे भरत शत्रुहन शील शोभा के समुद्र औ प्रताप के सूर्य हैं। इहां चारो भाइन को वर्णन करि यह जनाये कि आप को अन्यत्र बर न ढूंढ़नो परैगो ॥ १ । ताड़कादि बध फेर कहत हैं ताड़क मारि कै यज्ञ राखे औ प्रतिज्ञा भले पाले कोटि कोटि भट एक एक चोट के किए तिन में एक चोट के जातुधानै बान के बेगै से उड़ाने जात हैं ताते तिन के गात सूखि गए बवंडर के पत्ता सम भाव फिर भूतल में न आए॥ २ ॥ शिला के कोर छुअत अहल्या दिव्य देह भई चरण कमल के पारस के गुण देखे भाव जैसे पारस के छुए लोहा सोना होत तैसे जड ते दिव्य भई श्रीराम के प्रसाद ते रावरे गुरु जो गौतम जी ते खसम भए। भाव रड़ुआपन छूटा औ सतानंद अपने माता के पूत भए। भाव बे महतारी के टुअर कहावत रहे सो छुटा ॥ ३ ॥ प्रेम औ परिहास तें पुष्ट भए जे सुंदर भाव के वचन परस्पर कहत हैं ते सुनत मात्र सब ही को सुख भयो। गोसाईं जी कहत हैं कि कौशिक जनक जी को भाग सराहे औ कहे विधि अनुकूल से सुंदर दांव के पासा सुढार होत है इहां सुंदर पासा परना रघुनाथ का आगमन है ॥ ४॥६७ ॥

ए दोऊ दसरथ के वारे। नाम राम घनस्याम लषन लघु नष सिष अंग उज्यारे ॥ १ ॥ निज हित लागि मांगि आने मै धरम सेतु रषवारे। धीर बीर विरुदैत बांकुरे महा बाहु बल भारे ॥ २ ॥ एक तीर तकि हती ताडका किय सुर साधु सुषारे । जज्ञ राषि जग साषि तोषि रिषि निदरि निसाचर मारे ॥ ३ ॥ मुनितिय तारि स्वयंबर पेषन आए मुनि बचन तिहारे। राउ देषि है पिनाक नेक जेहि नृपति लाज जर जारे ॥ ४ ॥ सुनि सानंद सराहि सपरिजन बारहि बार निहारे। पूजि सप्रेम प्रसंसि कौसिकहिं भूपति सदन

सिधारे ॥ ५ ॥ सोचत सत्य सनेह विवस निसि नृपहि गनत गएतारे । पठये बोलि भोर गुर कै संग रंगभूमि पगुधारे ॥६॥ नगर लोग सुधिपाइ मुदित सबही सब काज बिसारे । मनहुं मघा जल उमगि उदधि रुष चलें नदी नद नारे ॥ ७ ॥ ए किसोर धनु घोर बहुत बिलषाति बिलोकनिहारे । टर्‍यौ न चांप तिन्ह ते जिन्ह सुभटनि कौतुक कुधर उषारे ॥ ८ ॥ ए जाने बिनु जनक जानियत करिपन भूप हंकारे। नतरु सुधा-सागर परिहरि कत कूप षनावत षारे ॥ ९ ॥ सुषमा सील सनेह सानि मानो रूप बिरंचि सँवारे । रोम रोम पर सोम काम सत कोटि बारि फेरि डारे ॥ १० ॥ कोउ कहै तेज प्रताप पुंज चित ये नहि जात भियारे । छुअत सरासन सलभ जरे गो ये दिनकर वंस दियारे ॥ ११ ॥ एक कहै कछु होउ सुफल भए जीवन जनम हमारे । अवलोकि भरि नयन आजु तुलसी के प्रानहुते प्यारे ॥ १२ ॥ ६८ ॥

उज्यारे कहे सुंदर ॥ १ ॥ धर्मसेतु के रक्षक धीर बीर विरदवाले बांके आजानु बांहु और भारी बल वाले जे श्री राम लषन तिन को निज हित लागि मैं मांगि आने ॥ २ ॥ ३ ॥ धनु तोरै सो बरै जानकी यह बचन सुनि नृपति लाज जरिजारे लाज रूप ज्वर ते राजनि को जिन्ह ने जारे हैं ॥ ४ ॥ सपरिजन परिवार सहित जनक जी ॥ ५ ॥ सत्य औ सनेह के विवस ते सोचत हैं । भाव न सत्यै छोड़त बनत न रामसनेहै । राजा को तारा गनते राति गई भाव कब बिहान होयगो ॥६॥ मानो मघा नक्षत्र के जल ते नदी नारे उमगि के समुद्र के ओर चले इहां सुधि पावना मघा को जल है, उदधि श्री राम को सरूप है, नदी नद नारे पुरवासी हैं ॥ ७ ॥ कौतुक में कुधर कहे पर्वत को जिन्ह उखारे अर्थात् रावणादि ॥ ८ ॥ हकारे बोलाए इहां सुधासागर रघुनाथ हैं औ खारा कूप प्रतिज्ञा है ॥ ९ ॥ परम शोभा शील औ स्नेह सानि

कै मानो इन के रूप ब्रह्मा ने संवारे फिरि रोम रोम पर सत कोटि चंद्रमा औ काम नेवछावरि करि डारे ॥ १० ॥ कोऊ कहत हैं कि हे भैया तेज औ प्रताप के पुंज हैं तातें चितए नहीं जात हैं। ए दिनकर बंस दीपक के छुअत मात्र सरासन रूप फनिगा जरैगो ॥११॥ गोसाईं जी कहत हैं आजु नयन भरि प्रान हुं ते प्यारे के अवलोके ॥१२॥६८॥

जनक बिलोकि बार बार रघुबर को। मुनिपद सीस नाय आयसु असीस पाइ एई बाते कहत गवन कियो घर को ॥ १ ॥ नींद न परत राति प्रेम पन एक भांति सोचत सकोचत विरंचि हरिहर को। तुम्ह ते सुगम सब देव देषिवे को अब जसु हंस किये जोगवत जुग पर को ॥ २ ॥ ल्याये संग कौसिक सुनाये कहि गुनगन आए देषि दिनकर कुल दिनकर को। तुलसी तऊ सनेह को सुभाउ बाउ मानो चल दल को सो पात करै चित चर को ॥ ३॥६९ ॥

एई बाते कहत अर्थात् श्रीराम लक्ष्मण विषयक बातैं कहत ॥ १ ॥ राति में नींद नाहीं परत जाते प्रेम औ प्रतिज्ञा एक भांतिहै। भाव त्याग योग दूनो नाहीं ताते सोचत हैं औ ब्रह्मा विष्णु शिव को सकोच देत हैं, हे देव ! तुम ते सब सुगम सुनत आए सो अब देखिवे को है अब कवि की उक्ति है कि श्री जनक महाराज अपने यस को हंस किए ताके दोऊ पर के योगवत हैं इहां दोऊ पर प्रेम औ पन है ॥ २ ॥ कौशिक ऐसे महात्मा अर्थात् अनहोनी करनिहारे ते संग लेआए औ रघुनाथ के गुनगन मारीचादि बध औ अहल्या को पाषान ते चैतन्य करना कहि सुनाए औ आपो दिनकर कुल दिन कर को देखि आए। भाव जाके देख ब्रह्मानंदो भूलि गयो सो गोसाईं जी कहत हैं ताहू पर सनेह को सुभाव मानो वायु है सो पीपर के पात के समान चित्त को चल करत है ॥ ३॥६९ ॥

राग केदारा। रंगभूमि भोरे ही जाइकै। राम लषन लषि लोगलूटि है लोचन लाभ अघाइकै ॥ १ ॥ भूपभवन

घर घर पुर बाहर इहै चरचा रही छाइकै। मगन मनोरथ मोद नारि नर प्रेम बिबस उठै गाइकै ॥ २ ॥ सोचत बिधि गति समुझि परस्पर कहत बचन बिलषाइकै । कुअर किशोर कठोर सरासन असमंजस भयो आइकै ॥ ३ ॥ सुकृत संभारि मनाइ पितर सुर सीस ईस पद नाइ कै। रघुबर कर धनुभंग चहत सब अपनो सो हितु चितु लाइकै । ॥ ४ ॥ लेत फिरत कनसुई सगुन सुभ बूझत गनक बुलाइ-कै । सुनि अनुकूल मुदित मन मानहु धरत धीरजहि धाइकै ॥ ५ ॥ कौसिक कथा एक एकनि सो कहत प्रभाउ जनाइ कै । सीय राम संयोग जानियत रच्यौ बिरंचि बनाइकै ॥६॥ एक सराहि सुबाहु मथन बर बाहु उछाह बढाइकै। सानुज राज समाज बिराजिहै राम पिनाकु चढाइकै ॥७॥ बडी सभा बडो लाहु बडो जसु बडो बडाई पाइकै। को सोहिहै और को लायक रघुनायकहि बिहाइकै ॥ ८ ॥ गवनिहैं गंवहि गवाइ गरब गृह नृपकुल बलहि लजाइ-कै । भली भांति साहिब तुलसी के चलिहै व्याहि बजाइकै ॥ ९॥७० ॥

रंग इ० सु० ॥१॥ मनोरथ जनित आनंद में नारि नर मगन हैं। प्रेम के बिशेष बस हैं ताते गाय उठे ॥ २ ॥ शोचत इ० सु० ॥ ३ ॥ अपनो सो हितु चितु लाय कै अपने हित समान चित्त लगाय के ॥४॥ कनसुई कानाफुसुकी अर्थात् सलाह की बातें सुनत फिरत औ ज्योतिषी बोलाय कै सुभ सगुन बूझत अनुकूल सगुन सुनि मुदित होत हैं मानो सगुन नाहीं सुनत हैं धीरज कों धाइ कै धरत हैं ॥५॥ प्रभाव जनाय कै कौशिक की कथा एक एकनि सो कहत। भाव जो नहीं होनिहार ताके करनिहारे बिश्वामित्र जी हैं ताते सीताराम जू को संयोग

विरंचि ने बनाय कै रच्यो यह जानियत है ॥ ६ ॥ एक उछाह बढ़ाय कै सुबाहु के मथनिहार जो रघुनाथ की श्रेष्ठ बाहु है ताको सराहि कै कहत हैं कि पिनाक चढ़ाय कै अनुज सहित श्रीरामराज समाज में शोभि हैं ॥ ७ ॥ बड़ी इ० सु० ॥ ८ ॥ नृपन के कुल कहैं समूह लजायकै औ गर्व बल को गंवाय गवहिं से अर्थात् बहाने से गृह को गवनिहैं ॥ ९॥७० ॥

राग टोड़ी—भोर फूल बीनवे को गए फुलवाई है। सीसनि टिपारे उपवीत पीत पट कटि दोना बाम करनि सलोने भे सवाई है ॥ १ ॥ रूप के अगार भूप के कुमार सुकुमार गुरु के प्रान अधार संग सेवकाई है। नीच ज्यौं टहल करें रुष राषै अनुसरै कौसिक से कोही बस किये दुहु भाई है ॥२॥ सषिन सहित तेहि औसर बिधि संजोग गिरिजा जू पूजिवे को जानको जू आई है। निरषि लषन राम जाने रितुपति काम मोहि मानो मदन मोहनो मूडनाई है ॥ ३ ॥ राघो जू श्री जानकी लोचन मिलिवे को मोद कहिवे को जोग न मैं बाते सी बनाई है। स्वामी सीय सषिन्ह लषन तुलसीको तैसो तैसो मनभयो जाको जैसीयै सगाई है॥४।७१

भोरहीं फूल बीनिवे को फुलवारी में गये हैं शिरन पर टोपी है औ पीत यज्ञोपवीत है और पीत पट कटि में है इहां देहली दिपक न्याय करि के पीत को दूनो के संग करना औ बाम हाथन में दोना है औ सवाई सलोने भए हैं। सवाई होवे को यह भाव कि अंग आवरण रहित हैं वा कदापि कोऊ आए अपने रूप से दवाय न लेय ताते सवाई भए वा कुछ मदन महीप का भी रंग आय पड़ा है ताते वा विदेह महाराज की वाटिका की छवीलीं फूली कलीन ते बाम अंग भूषित है ताते सवाई सलोने भए हैं सो जब कलिन ते एतना भए तब आगे नहीं जानते कि केतना होहिंगे वा दोना लेने से एक मुद्रा विचित्र कढ़ी

ताते सवाई कहे एक तो रूप के गृह हैं भाव रूप मात्र के आधारभूत हैं ताहू पर भूप के कुमार हैं अर्थात् काहू साधारन के नहिं ताहू पर सुकुमार हैं औ गुरु के प्राण आधार हैं तथापि संग में सेवकाई करत हैं कैसे करत सो लिखत हैं नीच जैसे टहल करै तस करत औ रुष राखे काम करत हैं। कौसिक ऐसे क्रोधी को दोऊ भाइ बस किए हैं॥२॥ श्रीलखनलाल श्रीराम जू को निरखे जाने कि यह राजकुमार नहीं हैं बसंत औ काम हैं ताते मोहि गई मानो देखि न मोही काम ने मूड पर मोहनी नाई है ताते मोही ॥३॥ श्रीराघव जू औ श्रीजानकी जू के नजरि मिलवे को जो आनंद सो कहिवे योग्य नहीं है। हम ने बनाई बातें ऐसी कही हैं रघुनाथ जी को औ जानकी जू को सखिन को औ लखनलाल जू को औ तुलसी को जाकी जैसी सगाई है ताको तैसो मन होत भयो इहां आनंद में भूलि गोसाईं जू अपने को प्रत्यक्ष सम कहे ॥ ४॥७१ ॥

पूजि पारवती भले भाय पाय परि कै। सजल सुलोचन सिथिल तन पुलकित आवै न बचन मन रह्यौ प्रेम भरि कै ॥ १ ॥ अंतरजामिनि भवभामिनि स्वामिनि सोंहौ कही चहौं बात मातु अंत तौ हौं लरि कै। मूरति कृपाल मंजु माल दै बोलत भई पूजो मनकामना भावतो बरु बरि कै॥२॥ राम कामतरु पाइ बेलि ज्यौं बोंडी बनाइ माग कोषि पोषि फैलि फूलि फरि कै। रहौगी कहौगी तब सांची कही अंबा सिय गहे पांय है उठाय माथे हाथ धरिकै ॥ ३ ॥ मुदित असीस सुनि सीस नइ पुनि पुनि बिदा भई देवी सों जननि डर डरि कै। हरषी सहेली भयो भावतो गावती गीत गौनी भवन तुलसी के प्रभु को हियो हरिकै ॥४।७२॥

पूजि इ० सु० ॥ १ ॥ अंत तो हौं लरिकै कहिवे को यह भाव कि अंतर्जामिनी सो कुछ न कहा चाहिए क्योंकि सब जानत ही हैं पर

कहिवे को जो चाहत हौं सो लरिका हौं सो कृपाला जो मूरति है सो सुंदर माला दै करिकै बोलति भई कि मन भावतो बर बरि कै तुम्हारी मनकामना पूजि जाउ श्रीरघुनाथरूप कल्पवृक्ष पाइकै फैली। बेली के समान बनाय करि कै माग कोपि ते तुष्ट पुष्ट ह्वै फैलि फूलि फरि कै जब रहोगी तब कहोगी कि अंबा ने सांची कही यह सुनि जानकी जू चरन गहे तब है कहै भाव यह क्या करती हौ औ माथे हाथ धरि कै उठाय लिए ॥ ३॥४॥७२ ॥

रंगभूमि आये दसरथ के किसोर हैं। पेषन सो पेषन चले हैं पुर नर नारि बारे बूढे अंध पंगु करत निहोर हैं॥ १ ॥ नील पीत नीरज कनक मरकत घन दामिनि बरन तन रूप के निचोर हैं। सहज सलोने राम लषन ललित नाम जैसे सुने तैसेई कुअर सिरमोर हैं॥ २॥ चरन सरोज चारु जंघा जानु उरू कटि कंधर बिसाल बाहु बडे बरजोर हैं। नीके कै निषंग कसे कर कमलनि लसै बान बिसिषासन मनोहर कठोर हैं॥ ३ ॥ काननि कनकफूल उपवीत अनुकूल पिअरे दुकूल बिलसत आछे छोर हैं। रा-जिव नयन बिधु बदन टेपारे सिर नष सिष अंगनि ठगौरी ठौर ठौर हैं॥ ४ ॥ सभा सरबर लोक कोकनद कोकगन प्रमुदित मन देषि दिनमनि भोर हैं। अबुध असैले मन मैले महिपाल भये कछुक उलूक कछु कुमुद चकोर हैं॥५॥ भाई सो कहत बात कौसिकहि सकुचात बोल घनघोर से बोलत थोर थोर हैं। सनमुष सबहि बिलोकत सबहि नीकी कृपा सो हेरत हँसि तुलसी की ओर हैं॥ ६ ॥ ७३ ॥

पुर के नर नारि तमासा सम देखन चले हैं औ बारे बूढ़े अंध पंगु निहोरा करत हैं भाव हम सब को भी ले चलो। शंका। अंध काहे

को निहोरा करत हैं। उत्तर। युगल राजकिशोर शिरमौर की बात सुनिवे हेतु ॥१॥ श्याम कमल औ मरकत मणि औ मेघ के वर्ण सम तन श्रीराम जू को है औ पीत कमल औ कनक औ दामिनी के वर्ण सम तन श्रीलक्ष्मण जू को है औ रूप को निचोर है अर्थात् उत्तमांश है औ सहज ही दोऊ भाई सलोने हैं अर्थात् बनावट ते नहीं औ नामौं सुंदर है जैसे सुने रहे तैसेई दोऊ भैया कुअँरन के शिरमौर हैं ॥२॥ सुंदर चरण कमल औ जंघा औ ठेहुन औ उरु औ कटि औ उन्नत स्कंध है औ बाहु बड़े जोरावर हैं। शंका। बाहन की जोरावरी कैसे जाने। उत्तर। सुबाहु आदि को वध सुनिवे तें। जंघा उरु में पुनरुक्ति शंका नहीं करना क्योंकि जंघा नाम ठेहुन के नीचे के भाग का है औ ठेहुन के ऊपर के भाग कै उरु नाम है, जाको आज कालि लोग जंघा कहत हैं। पर गोसाईं जी शास्त्र रीति ते लिखे। जंघातु प्रसृताजानूरुप-र्वाष्ठीवदास्त्रियाम्। सक्थिक्लीवेपुमानुरुस्तत्संधिः पुंसि वङ्क्षणः। इत्यमरः जंघाप्रसृतौ द्वेजंघायाःजानु उरुपर्व अष्ठीवत्त्रीणिजानुनःसक्थिउरूद्वेऊरोः॥ भली भांति तरकस कसे हैं औ करकमलनि में बान धनुष हैं ते देखिवे में तो मनोहर पर कठोर हैं॥ ३॥ कानन में पुष्पाकार सोने के कुंडल हैं औ अनुकूल यज्ञोपवीत है अर्थात् जस क्षत्री को चाहिए औ पीत रंग को वस्त्र है तामें आछे किनारे शोभत हैं अर्थात् मोती मणि आदि करि कै, कमल सम नयन औ चंद सम मुख हैं, टोपी सिरन में है, नख ते शिखा पर्यंत अंगन में ठौर ठौर ठगोरी अर्थात् जहां जाइ मन तहंई लोभाई॥ ४॥ सभा जो सोई श्रेष्ठ तड़ाग औ लोग सब जो हैं सोई कमल औ चक्रवाक के समूह हैं, ते भोर के दिनमणि रघुनाथ के देखि प्रमुदित भए, मूढ़ मन मैले आशावाले जे महिपाल हैं ते कछु उल्लू अर्थात् घुघुआ कछु कुमुद कोई कछुक चकोर भए। कोऊ अस कहत हैं महिपाल जे मूढ़ ते उलूक औ जे नहीं सहनेवाले ते कुमुद औ जे मन मैले ते चकोर भए॥ ५॥ यद्यपि बोल घन सम गंभीर हैं पर विश्वा-मित्र ते सकुचात हैं ताते भाई ते धीरे धीरे बात कहत हैं सन्मुख सब के हैं औ सब के भली भांति देखत हैं औ कृपा से हंसि कै तुलसी के ओर हेरत हैं॥ ६॥ ७३॥

एई राम लषन जे मुनिसंग आए हैं। चौतनी चोलना काछे सषि सोहैं आगे पाछे आछेहु तें आछे आछे आछे भाय भाये हैं ॥१॥ सांवरे गोरे सरीर महा बाहु महाबीर कटि तून तीर धरे धनुष सुहाए हैं। देषत कोमल कल अतुल बिपुल बल कौसिक कोदंड कला कलित सिषाये हैं ॥ २ ॥ इन्हही ताडिका मारी गौतम की तीय तारी भारी भारी भूरि भट रन बिचलाये हैं। रिषि मष रषवारे दसरथ के दुलारे रंग भूमि पगुधारे जनकु बुलाये हैं ॥ ३ ॥ इन्ह के बिमल गुन गनत पुलकित तन सतानंद कौसिक नरेसहिं सुनाये हैं। प्रभु पद मन दिये सो समाज चित किए हुलसि हुलसि हिये तुलसिहु गाये हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

जे राम लषन मुनि संग आए हैं ते एई हैं, हे सखी टोपी औ कुरुता पहिरे हैं औ आगे पाछे शोभत हैं अर्थात् आगे राम जी पाछे लक्ष्मण जी। सुंदर हूं ते सुंदर सुंदर हैं औ भला भाव जो कोई पदार्थ है ताहू को भाए हैं वा भले यह भैया हैं ताते हम सब के भाए हैं वा सुंदर हू ते जो सुंदर ताहू ते सुंदर सुंदर भैया हैं ताते भाए हैं वा भला भाव है जेहि को अर्थात् विश्वामित्र जी तिन के भाए भए हैं ॥ १ ॥ देखत में सुंदर कोमल हैं पर बड़े बलवान नहीं तुलत हैं वा बहुत बल है अतएव अतुल हैं औ विश्वामित्र जी ने सुंदर धनुर्विद्या की कला इन को सिखाए हैं ॥ २ ॥ जनक जू के बोलाए ते रंगभूमि में पग धारे हैं इन के बिमल गुन गन को पुलकित तन ते सतानंद औ विश्वामित्र जू नरेश को सुनाए हैं ॥ ४ ॥ ७४ ॥

रागकान्हरा—सीय स्वयंबरु माई दोउ भाई आए देषन। सुनत चली प्रमदा प्रमुदित मन प्रेम पुलकि तन मनहु मदन मंजुल पेषन ॥ १ ॥ निरषि मनोहरताई सुष पाइ कहै एक एक सो भूरि भाग हम धन्य आलिए दिन एषन । तुलसी

सहज सनेह सुरंग सब सो समाज चित्त चित्रसार लागी लिषन ॥ २ ॥ ७५ ॥

प्रमदा स्त्री पेखन कहैं देखन ॥ १ ॥ भूरि बहुत, खन कहैं क्षण, गोसाईं जी कहत हैं सो सब समाज नारिन को अपने सहज सनेह रूपी सुंदर रंग से अपने चित्त रूपी चित्रसार में लिखने लगीं ॥ २ ॥७५॥

राग गौरी —राम लषन जब दृष्टि परेरी । अवलोकत सब लोक जनकपुर मनो बिधि बिबिध बिदेह करेरी ॥ १ ॥ धनुष जग्य कमनीय अवनि तलकौतुक ही भए आय षरेरी। छबि सुरसभा मनहु मनसिज के कलित कल्पतरु रूप फरेरी ॥ २ ॥ सकल काम बरषत मुष निरषत करषत चित हित हरष भरेरी । तुलसी सबै सराहत भूपहिं भले पैत पासे सुढर ढरेरी ॥ ३ ॥ ७६ ॥

री सखी जब ते राम लषन दृष्टि परे तब ते जनकपुर के लोग देखत हैं अर्थात् एकटक देखत हैं। मानो विधाता ने अनेकन विदेह किए हैं। भाव विदेह महाराज के डाह ते, इहां विदेह कहिवे ते सब को देहाध्यास रहित जनाए ॥ १ ॥ धनुष यज्ञ के सुंदर जो भूमि तल है तामें कौतुकही आय कै खड़े भए हैं। मानो धनुष यज्ञ की सुंदर भूमि नहीं है छबियुक्त सुरसभा जो सुधर्म्मा सो है औ श्रीराम लषन नहीं हैं काम के शोभित कल्पवृक्ष हैं औ राम लषन का जो रूप है सो रूप नहीं है तेहि कल्पवृक्ष को फल है। इहां दुइ कल्पवृक्ष जानना ॥२॥ मुख निरखत मात्र में सकल कामना को बरषत हैं इहां कल्पवृक्ष ते अधिक जनाए क्योंकि कल्पबृक्ष छाया के नीचे गए फल देत है औ ए देखतै मात्र औ हर्ष भरे जेहि तन के चित्त तेहि को कर्षत हैं वा यद्यपि चित्त चोरावत हैं तथापि हित मानि हर्ष भरे वा चित को तो चोरावत हैं पर हित ते हर्ष भरत हैं । गोसाईं जी कहत हैं कि जनक महाराज के सब सराहत हैं कि भले दाव के पासे सुंदर परे हैं। भाव जो पन किए ताको भलो फल पाए ॥ ३ ॥ ७६ ॥

नेकु सुमुखि चितु लाइ चितौरी। राजकुअर मूरति रचिवे की रुचि सुचि बिरंचि श्रमु कियो है कितौरी ॥ १ ॥ नख सिख सुंदरता अवलोकत कह्यौ न परत सुख होत तितौरी। सांवर रूप सुधा भरिबे कहु नयन कमल कल कलस रितौरी ॥ २ ॥ मेरे जान इन्हहि बोलिवे कारन चतुर जनक ठयो ठाठ इतौरी। तुलसी प्रभु भंजिहै संभुधनु भूरि भाग सिय मातु पितौरी ॥ ३ ॥ ७७ ॥

अरी सुमुखि तनक चित लगाय कै देखु। ब्रह्मा ने राजकुंअर की मूरति रचिवे की रुचि ते केतनो श्रम कियो है। नख ते सिख लों सुंदरताई के अवलोकत जेतना सुख होत है तेतना कहि नहिं परत। सांवर रूप जो कोई अमृत है ताको भरिवे को सुंदर नयन कमल रूप कलश को खाली करो। इहां और ओर न देखना खाली करना है॥२॥ मेरे जान चतुर जनक ने इन्हैं बोलिवे कारन इतो ठाट ठयो है। तुलसी के प्रभु शंभुधनु तोरिहैं। भूरिभाग जानकी जू के माता औ पिता के हैं ॥ ३॥७७ ॥

राग सारंग। जब ते राम लषन चितयेरी। रहे एकटक नर नारि जनकपुर लागत पलक कलप बितयेरी ॥१॥ प्रेम बिबस मागत महेस सो देषत ही रहिये नितएरी। कै ए सदा बसहु इन्ह नयनन्हि कै नयन जाहु जितयेरी॥२॥ कोउ समुझाइ कहै किन भूपहिं बडे भाग आए इतयेरी। कुलिस कठोर कहां संकरधनु मृदु मूरति किसोर कितए री ॥ ३ ॥ बिरचत इन्हहिं बिरंचि भुअन सब सुंदरता षोजत रितए री। तुलसिदास ते धन्य जनम जन मन क्रम बच जिन्ह के हित ए री ॥ ४॥७८ ॥

जब ते इ० सुगम ॥ ४॥ ७८ ॥ टिप्पणी—नर नारियों को पलक लगाने का समय एक कल्प के समान मालूम होता है अर्थात् वे लोग पलक

गिराने भर के लिये भी राम लषन का दर्शन नहीं छोड़ना चाहते ॥१॥ प्रेम के विशेष वश होकर महेस से मांगते हैं कि ये यहीं रहें वा जहां जायं वहां मेरे नेत्र भी जायं ॥ २ ॥ ब्रह्मा ने इन की सुन्दरता बनाते समय भुवन भर की सुन्दरता रितये अर्थात् खाली कर दिये। तुलसी दास जी कहते हैं कि जिन के मन वच कर्म से ये हित हैं उन के जन्म धन्य हैं ॥ ४ ॥ ७८ ॥

सुनु सखि भूपति भलोइ कियो री। जेहि प्रसाद अवधेसु कुअंर दोउ नगर लोग अवलोकि जियो री ॥ १ ॥ मानि प्रतीति कहैं मेरे ते कत संदेहबस करत हियो री। तौलौं है यह संभुसरासन श्री रघुबर जौलौं न लियो री ॥ २ ॥ जेहि बिरंचि रचि सीय संवारी अरु रामहि ऐसो रूप दियो री। तुलसिदास तेहि चतुर बिधाता निजकर यह संयोग सियो री ॥ ३॥७९ ॥

सुन इ० सु० ॥ ७९ ॥ टिप्पणी—तुलसीदास जी कहते हैं कि जिस ब्रह्मा ने सीता को संवारा और राम को ऐसा रूप दिया है उसी चतुर विधाता ने यह संयोग (दोनों का मेल वा विवाह) भी सियो कहैं सीया अर्थात् रचा है ॥ ३॥७९ ॥

अनुकूल नृपहि सूलपानिहैं। नीलकंठ कारुन्यसिन्धु हर दीनबंधु दिनदानिहैं ॥ १ ॥ जो पहिलेहि पिनाक जनक को गए सौंपि जिय जानिहैं। बहुरि त्रिलोचन लोचन के फल सबहि सुलभ किये आनिहैं ॥ २ ॥ सुनियत भव भावते राम हैं सिय भावती भवानि हैं। परिषत प्रीति प्रतीति पयजपनु रहे काज ठटु ठानिहैं ॥ ३ ॥ भये बिलोकि बिदेह नेहबस बालक बिनु पहिचानिहै। होत हरे होने बिरवनि दल सुमति कहति अनुमानिहै ॥ ४ ॥ देखिअत

भूपर भोर के से उडगन गरत गरीब गलानि है। तेज प्रताप बढत कुअंरन को जदपि सकोचो बानि है ॥५॥ बय किसोर बरजोर बाहुं बल मेरु मेलि गुन तानिहै। अवसि राम राजीव बिलोचन संग सरासन भानिहैं ॥ ६ ॥ देषिहैं व्याह उछाह नारि नर सकल सुमंगलषानि हैं। भूरिभाग तुलसी तेउ जे सुनिहैं गाइहैं बजाइहैं ॥ ७॥८० ॥

नृप को शूलपाणि अनुकूल हैं। भाव शूल जो लिये हैं तब शूलों को क्यों न छेदैंगे। नलिकंठ हैं औ करुणा के समुद्र हैं। भाव काल कूट नाम विष तें सुरासुर को जरत देखि करुणाबस ता बिष कों पीए जब उदासीन पर एतना करुना है तब ए तौ प्रीतिपात्र हैं औ हर हैं अर्थात् दुःख हरने का सुभाव है औ दीनबंधु हैं भाव हम सब पिनाक के ओर तें दीन ह्वै रहे हैं सो क्यों न सहाय करैंगे औ दीनन के दानी हैं तो क्यों न दान देहिंगे ॥ १ ॥ जो शिव जू पहिल ही जनक जू को जिय मों जानि के पिनाक सौंपि गए हैं। जिय जानि कहिबे को यह भाव कि आगे काम आवैगा। फेर त्रिलोचन ने श्रीराम रूप लोचन के फल को सब ही को सुलभ कियो है। श्रीमद्रामायणे विश्वामित्रं प्रति जनकवाक्यं। देवराता इति ख्याता निमेः षष्ठीमहीपतिः। न्यासो यं तस्यभगवन् हस्तेदत्तोमहात्मनः ॥ २ ॥ सुनियत है कि श्री शिव को श्रीराम सोहाते हैं औ भवानी जी को जानकी जू सोहाती हैं प्रीति विश्वास पैजपन परिषत हैं ताते कार्य में बिलम्ब ठानि रहे हैं। इहां अपने में श्रीराम जानकी के प्रीति प्रतीति को औ धनु तोरै में राजन के पैज को औ बिना धनु टूटे न विवाह करिबे में जनक के पन को परिषत ॥ ३ ॥ बिनु पहिचाने जिन्हैं बिलोकि के बिदेहबस भए तेई ए बालक हैं। होनिहार बिरवन के हरे हरे पात होत हैं। अनुमानि के हमार सुंदर मति कहति है। इहां अनुमान यह है कि बिदेह ह्वै के बे पहिचाने नेहबस भए तो होनिहार नीक है ॥ ४ ॥ औ भोर के तारागण सम राजन को देखियत है। मारे ग्लानि के गरीब गले जात हैं औ तेज प्रताप कुअंरन को बढ़त है। यदपि संकोची बानि है अर्थात् कुछ अहं-

कारयुक्त यद्यपि नहीं बोलत हैं ॥ ५ ॥ भानि हैं तोरि हैं ॥ ६ ॥ सकल सुमंगल के खानि हैं ताते नारि नर व्याह उछाह देखिहैं ॥ ७ ॥ ८० ॥

राग केदारा—रामहि नीके कै निरषि सुनयनी । मन-सहु अगम समुझि यह अवसरु कत सकुचत पिकबयनी ॥१॥ बडे भाग मखभूमि प्रगट भई सीय सुमंगल अयनी । जा-कारन लोचन गोचर भइ मूरति सब सुष दयनी ॥२॥ कुल-गुरु तिय के बचन मधुर सुनि जनक जुवति मति पयनी । तुलसी सिथिल देह सुधिबुधि करि सहज सनेह बिषयनी ॥ ३॥८१ ॥

श्री सतानन्द की पत्नी सुनैना जू से कहति हैं कि श्रीराम को नीके निरखहु हे पिकबैनी मनो ते अगम अर्थात् श्रीराम हैं अस समुझि के फिर कत सकुचति हौ ॥ १ ॥ सीय सुमंगल को गृह बड़े भाग्य ते यज्ञ भूमि में प्रगट होती भई जा कारण ते सब सुख देनिहारी मूरति नैनन की विषै भई। श्रीमद्रामायणे विश्वामित्रं प्रति जनकवाक्यम्। "अथ मे कृषतः क्षेत्रं लांगलादुत्थिता ततः। क्षेत्रं शोधयता लब्धा नाम्नासीतेति विश्रुता" अथेति वृत्तान्तरारम्भे क्षेत्रं यागभूमिम् मम कृषतः मयि कर्षति अग्निचयनार्थमितिशेषः ऋषभेण कर्षतीत्यादिशास्त्रात् लाङ्गलादुत्थिता आविर्भूता यज्ञक्षेत्रं शोधयता सीताः लाङ्गलपद्धतेर्मया लब्धा ततो नाम्ना सीतेति प्रसिद्धा । पाद्मे च । "अथ लोकेश्वरी लक्ष्मीर्जनकस्य पुरे-स्वतः शुभक्षेत्रे हलोत्खाते तारेचोत्तरफाल्गुने अयोनिजा पद्मकरा वालार्कशशिसन्निभा सीतामुखे समुत्पन्ना वालभावेन सुन्दरी। सीतामुखोद्भवात् सीता इत्यस्या नाम चाकरोत्।" भविष्येच। "सर्वर्त्तुनिकरश्रेष्ठे ऋतौ तु कुसुमाकरे। मासि पुण्यतमे विप्र माधवे माधवप्रिये ॥ नवम्यां शुक्लपक्षे च वासरे मङ्गले शुभे ॥ सार्प्पर्क्षे च मध्यान्हे जानकीजनकालये ॥. आविर्भूता स्वयं देवी योगेषु गतिरुत्तमा"॥२॥ श्री जनक जू की रानी सुनैना जू मति की चोषी हैं सो कुलगुरु तिय के मधुर बचन सुनि के सहज सनेह बिषैनी बुद्धि करि जो देह के ओर ते शिथिल भई रहीं सो तेहि की सुधि

करत भई भाव श्रीराम के ध्यान में जो लगी रहीं सो प्रत्यक्ष देखन लगीं ॥३॥८१॥

मिलो बरु सुंदर सुंदरि सीतहि लायक सांवरो सुभग सोभाहू को परम सिंगारु। मनहू को मन मोहै उपमा को आन कोहै सुषमा सागर संग अनुज राजकुमारु॥ १॥ ललित सकल अंग तनु धरें की अनंग नैननि को फलु कैधों सिय को सुकृत सारु। सरदसुधासदन छबिहि निंदै बदन अरुन आयत नव नलिन लोचन चारु॥ २॥ जनक मन की रीति जानि बिरहित प्रीति ऐसी औ मूरति देषे रह्यो पहिलो बिचारु। तुलसी नृपहि ऐसो कहि न बुझावै कोऊ मन औ कुअर दोऊ प्रेम की तुला धौं तारु॥ ३॥८२॥

सुंदरी सीतहिं लायक शोभाहूं को परम सिंगार सुभग सांवरो बर मिलो उपमा को उपमा देइवे को॥ १॥ की अनंग कैधों कामदेव सारु फल सुधासदन चन्द्रमा आयत विस्तृत नव नलिन नवीन कमल चारु सुंदर॥ २॥ श्रीजनक के मन की रीति जानकी प्रीति ते बिशेष रहित है काहे ते कि ऐसिउ मूरति देखे पर पहिलोही विचार रह्यो। भाव नेमिए रहे प्रेमी न भए। महाराज को ऐसो कहि के कोऊ नहीं बुझावत है कि प्रतिज्ञा औ रघुनाथ कुअर इन दोउन को प्रेम की तुला पर धरि कै तौलो भाव कौन गरू है॥ ३॥८२॥

देषि देषि री दोऊ राजसुअन। गौर स्याम सलोने लोने लोयननि जिन की सोभा ते सोहै सकल भुअन॥ १॥ इन्ह ही ताडका मारी मग मुनितिय तारी रिषिमष राष्यौ रन दले हैं दुअन। तुलसी प्रभु को अब जनक नगर नभ सुजस बिमल बिधु चहत उअन॥ २॥८३॥

इहां देखि देखि देखु देखु के अर्थ में है। लोने लोयननि सुंदर

मेत ॥ १ ॥ दुअन दुष्ट, जनकपुर रूप आकाश में प्रभु को सुजस रूप बिमल चंद अब उगा चाहत है ॥ २ ॥ ८३ ॥

रागटोडी । राजा रंगभूमि आजु बैठे जाइ जाइकै। आपने आपने थल आपने आपने साज आपनी आपनी बर बानिक बनाइकै ॥ १ ॥ कौसिकसहित राम लषन ललित नाम लरिका ललाम लोने पठए बुलाइकै। दरस लालसा बस लोग चले भाय भले बिकसत मुष निकसत धाइ धाइकै ॥२॥ सानुज सानंद हिए आगे ह्वै जनक लिये रचना रुचिर सब सादर देषाइकै। दिये दिव्य आसन सुपास सावकास अति आछेआछे बीछे बीछे बिछौना बिछाइकै ॥३॥ भूपति-किसोर दुहु ओर बीच मुनिराउ देषिबे को दाउ देषो देषिबो बिहाइकै। उदय सयल सोहै सुंदर कुमर जोहै मानौ भानु भोर भूरि किरनि छपाइकै ॥ ४ ॥ कौतुक कोलाहल निसान गान पुर नभ बरषत सुमन सुबिमान रहे छाइ कै। हित अनहित रत विरत बिलोकि बाल प्रेम मोद मगन जनमफल पाइकै ॥ ५ ॥ राजा की रजाइ पाइ सचिव सहेली धाइ सतानंद ल्याए सिय सिविका चढाइकै। रूप दीपिका निहारि मृग मृगी नर नारि बियके बिलोचन निमेषि बिस-राइकै ॥ ६ ॥ हानि लाहु अनष उछाहु बाहुबल कहि बंदी बोले बिरद अकस उपजाइकै। दीप दीप के महीप आये सुनि पैजपनु को जै पुरुषारथ को औसर भोआइकै ॥ ७ ॥ आनाकानो कठहंसी मुहाचाही होनलागी देषि दसा कहत बिदेह बिलषाइकै। घरनि सिधारिऐ सुधारिए आगिलै काज पूजि पूजि धनु कीजै बिजय बजाइकै ॥ ८ ॥ जनक

बचन छुए बिरवा लजारु कैसे बीर रहे सकल सकुचि सिरनाइ-कै। तुलसी लषन माषि रोषि राषि रामरुष भाषि मृदु परुष सुभाय न रिसाइकै ॥ ९ ॥ ८४ ॥

राजा इ० आपनेर थल कहैं अपने अपने दरजा के माफिक बानिक बेष ॥ १ ॥ ललाम सुंदर विकसतमुख प्रसन्नमुख ॥ २ ॥ सानुज कुशकेतुसहित बीछे बीछे चुने चुने ॥ ३ ॥ देखिवो बिहाय कै और ओर देखिवो छोड़ि कै मानो दिव्य आसन नहीं है उदयाचल है ता पर सुंदर कुँअर जो हैं सो मानो भोर के सूर्य हैं सो अपना सब किरिन छपाय कै सोभत हैं। इहां किरिन प्रताप है ॥ ४ ॥ रत अनुरागी बिरत विरागी ॥ ५ ॥ श्रीजानकी जू के रूप रूपी दीपक को देखि कै मृग मृगी सदृश नर नारि एकटक है थकित भए ॥ ६ ॥ न टूटिवे ते बल प्रताप बीरता की हानि औ टूटिवे ते 'त्रिभुअन जै समेत बैदेही' को लाभ 'जेहि पिनाक बिनु नाक किए नृप' अनख 'धनु तोरै सो बरै जानकी' उछाह 'राजसमाज आज जेहि तोरा' बाहुबल ए सब कहि के रावन-बानासुरो भागि गए, यह कहना अकस उपजावना है। पैज पन अति-प्रतिज्ञा ॥ ७ ॥ आना कानी इसारा से अर्थात् पिनाक के ओर बतावन लगे कठहंसी वेहंसी आए हँसब को कहत हैं । मुहांचाही पहिले तुम उठो पहिले तुम उठो अस कहन लगे ॥ ८ ॥ छुए से जैसे लजारू को विरवा सकुचै तैसे श्रीजनक के बचन से सकल बीर सिरनाय के सकुचि रहे। लछिमन जू अमरखे औ रोखयुक्त भए श्रीरघुनाथ को रुख राखे स्वाभाविक रिसाय कै नहीं कठोर औ कोमल बचन भाषे ॥ ९॥८४ ॥

भूपति विदेह कही नीकीऐ जो भई है। बडेही समाज आजु राजनि की लाज पति हांकि आंक एकही पिनाक छीनि लई है ॥१॥ मेरो अनुचित न कहत लरिकाईवस पन परमिति और भांति सुनि गई है। नतरु प्रभु प्रताप उतरु चढाए चांप देतो पै देषाइ बल फल पापमई है ॥ २ ॥

भूमि के हरैया उखरैया भूमि धरनि के बिधि बिरचे प्रभाउ जाको जग जई है। बिहंसि हिय हरषि हटके लषन राम सोहत सकोच सील नेह नारि नई है ॥ ३ ॥ सहमी सभा सकल जनक भए बिकल राम लषि कौसिक असीस अग्या दई है। तुलसी सुभाय गुरु पाय लागि रघुराज ऋषिराज की रजाइ माथे मानि लई है ॥ ४ ॥ ८५ ॥

लछिमन जी की उक्ति है भूपति बिदेह ने जो भई है सो कही ताते ठीक है आंक एक ही कहैं निश्चय करि हांकि कहैं ललकारि कै ॥ १ ॥ प्रतिज्ञा की मर्यादा और भांति ते सुनि गई है । अर्थात् जो तोरे सो बरै कदापि यह नहीं होता तो भूमि के हरैआ औ भूमिधरन के उखरैआ को जीतनिहार जेहि को प्रभाव जगत में विधि बिरचे हैं तेहि उतरे चांप को प्रभु के प्रताप ते चढ़ाइ कै अपने बल को देखाय देते पर याको फल पापमई है । भाव बड़े के रहते छोटे का प्रथम बिवाह होना अनुचित है अर्थात् छोटा बड़ा दोऊ देव पितर के काम लायक नहीं रहत तथाच स्मृतिः "दाराग्नि होत्रसंयोगं कुरुतेयो ऽग्रजे स्थिते । परिवेता सविज्ञेयः परिवित्तिस्तु पूर्वजः ॥" यह कहनो अनुचित रहा पर मेरो कहनो अनुचित नहीं है क्यौंकि लरिकाई बस कहत हौं ॥२॥ हृदय में हरषि के मुसुकाय के श्री राम जू लखन को बरजे तब संकोच शील औ नेह ते श्री लखन लाल की नारि कहैं गर्दन नई भई सोहीं ।३।४।८५

सोचत जनक पोच पेच परि गई है। जोरि कर कमल निहोरि कहै कौसिक सों आयसु भो राम को सो मेरे दुचितई है ॥ १ ॥ वान जातुधानपति भूप दीप सातहू के लोकप विलोकत पिनाक भूमि लई है। जोतिलिंग कथा सुनी जाको अंत पाये बिनु आये विधि हरि हारि सोई हाल भई है ॥ २ ॥ आपुही बिचारिऐ निहारिये सभा की गति बेदमरजाद मानो हेतुवाद हई है । इन्ह के जितैहैं मन

सोभा अधिकानी तन मुख की सुषमा सुखद सरसई है ॥३॥ रावरो भरोसो बलु कैहै कोऊ किये छल कैधों कुल के प्रभाव कैधौ लरिकई है। कन्या.कल कीरति बिजय बिश्व की बटोरि कैधौं करतार इन्ह ही को निरमई है ॥४॥ पन की न मोह न बिसेष चिंता सीता हू की लुनि है पै सोई सोई जोई जेहि बई है । रहै रघुनाथ की निकाई नीकी नीकी नाथ हाथ सो तिहारे करतूति जाकी नई है ॥ ५ ॥ कहि साधु साधु गाधिसुवन सराहे राउ महाराज जानि जिय ठीक भली दई है। हरषे लखन हरषाने बिलखाने लोग तुलसी मुदित जाको राजाराम भई है ॥ ६ ॥ ८६ ॥

सोचत इ० । जनक जू सोचत हैं कि कठिन पेच परि गई है। भाव यह प्रतिज्ञा जो किया सो भला नहीं किया। जनक महाराज हस्तकमल जोरि कै निहोरा करि विश्वामित्र जू सो कहत हैं कि आप ने जो रघुनाथ को आज्ञा दिया तामें हम को दुचिताई है, अब दुचिताई को हेतु कहत हैं ॥१॥ बाणासुर रावण औ सातो दीप के राजा औ लोकपालन के देखत ही पिनाक ने भूमि को लई है अर्थात् भूमि को पकड़ि लई है। जोतिलिङ्ग को अंत नहीं है। यह कथा सुनि के अंत लेइवे को ब्रह्माजू ऊपर को गये औ विष्णु जू पाताल को गये पर तेहि लिंग को अंत न पाये। ब्रह्मा विष्णु हारि फिरि आए सोई हाल इहां भई है, भाव पिनाक केतना भारी है याको अंत कोऊ नहीं पावत है। ब्रह्मा विष्णु हारि गए लिंग का अंत न मिला यह काशीखंड में लिखा है ॥ २ ॥ हमार ही कहने पर नहीं आप भी बिचारिए और सभा की दसा देखिए कि कैसी है रही है जैसे बेद के मर्जाद को नास्तिक बाद नासत है। भाव तस पिनाक ने श्रीहत करि दिया है। अब श्रीराम का वर्णन करत हैं कि श्रीराम के मन जितौहैं है औ तन में शोभा अधिकाय रही है औ मुख की सुखद शोभा सरसाय रही है। इहां इन्ह के औ मुख नए जो बहु बचन शब्द हैं सो आदर में हैं वा दोऊ भाइन में लगाय लेना ॥३॥

सो जितौहैं मन आदि आप के भरोसा के बल सों है, कैधौं कोऊ देवता हैं छलते मनुष्य बने हैं, कैधों अपने कुल के प्रभाव से अर्थात् सूर्यबंशी हैं तेहिते तेजयुक्त हैं, कैधौं लरिकाई अर्थात् कुछ आगे पीछे को बिचार नहीं है कन्या सुंदर, कीर्ति औ विश्व की विजय बटोरिवे कों, कैधौं विधाता ने इनही को निर्मान कियो है ॥ ४ ॥ हे नाथ हम को अपने प्रतिज्ञा करने को मोह नहीं है और को को कहै सीता हू की विशेष चिंता नहीं है। कदापि विश्वामित्र जू पूछैं कि क्यों नहीं है तापर कहत हैं सोई सोई काटिहैं जोई जोई जेहि ने बोया है। भाव जीव कर्मबस दुख सुख भागी है पर नीकी नीकी जो रघुनाथ की निकाई है सो बनी रहै। यह बात की विशेष चिन्ता है, सो आप के हाथ है, आप कैसे हैं कि करनी नई है। भाव आजु लो ब्रह्मा छोडि सृष्टि कोऊ न करि सके सो आप किए तो यह कौन बड़ी बात है वा आप अनहोनी करनिहार हैं ॥ ५ ॥ विश्वामित्र जू ने आप की बात साधु है साधु है अस कहि के राजा को सराहे फिर कहे कि हे महाराज आप के जिय को जानी आप ने भला ठहराय राखा है। भाव रघुनाथ की निकाईए में सब की भलाई है। यह श्री जनक श्री विश्वामित्र को सम्बाद सुनि लषन हर्षे औ बिलखाने भए जो लोग रहे सो हर्षाने। गोसाईं जी कहत हैं कि यह आश्चर्य नहीं है जाको जई राजा राम हैं सोई मुदित होत हैं, भाव और के रोअतै रोअत जन्म बीतत है ॥ ६॥८६ ॥

सुजन सराही जो जनक बात कही है। रामही सुहानी जानि सुनि मन मानी सुनि नीच महीपावली दहन बिनु दही है ॥ १ ॥ कहैं गाधिनंदन मुदित रघुनंदन सों नृप गति अगह गिरा न जाति गही है। देषे सुने भूपति अनेक झूठे झूठे नाम साचे तिरहुति नाथ साषी देत मही है ॥ २ ॥ रागउ बिराग भोग जोग जोगवत मनु जोगी जागबलिक प्रसाद सिद्धि लही है। ताते न तरनि तें न सीरे सुधाकरहू तें सहज समाधि निरुपाधि निरवही है ॥ ३ ॥ ऐसेउ अगाध

बोध रावरे सनेह बस बिकल बिलोकियत दुचितई सही है। कामधेनु कृपा हुलसानी तुलसीस उर पन सिसु हेरि मर-जादा बांधी रही है ॥ ४॥ ८७ ॥

जो श्री जनक जू की कही बात है ताको सुजनों ने सराही औ मुनि की मन मानी भई बात है अस जानि श्रीराम को सोहात भई पर सो बात सुनि के नीच जो महिपावली है सो बिनु अग्नि के जरि जात भई ॥ १ ॥ गाधिनंदन रघुनंदन सो हर्षित कहत हैं कि मिथिलेश की गति गहिबे जोग नहीं है ताते बातहू नहीं गही जात है। नाम मात्र के झूठे झूठे अनेक भूपति देखे पर सांचे भूपति तिरहुतिनाथ ही हैं या बात की साक्षी पृथ्वी देति है, भाव कन्या उपजाय कै ॥ २ ॥ प्रीति औ बैराग्य भोग औ जोग सब महाराज के मन को जोगवत हैं भाव जेहि के ओर तनिक दृष्टि करत सो शीघ्र हाजिर है जात है। जोगी जाबलिक के प्रसाद ते यह सिद्धता को लही है। ताते सूर्य ते तप्त नहीं होत हैं औ और को को कहै चन्द्रमो ते शीतल नहीं होत हैं, उपाधि रहित स्वाभाविक समाधि को निर्बाह करत हैं। बायु आदि बस करि जो समाधि सो उपाधि सहित ॥ ३ ॥ हे श्रीराम जू आप के सनेह के बस ऐसेऊ अगाध बोध वाले जनक महाराज कों बिकल बिलोकियत है ताते अस जानि परत है कि इन के मन में निश्चै दुचितई है, यह सुनि के प्रतिज्ञारूपी बछरा को देखि कै कृपारूपी कामधेनु रघुनाथ के उर में हुलसानी पर विश्वामित्र जू की आज्ञा रूप मर्जादा में बांधी है ताते ठहर गई ॥ ४॥८७ ॥

रिषिराज राजा आजु जनकसमान को। आपु एहि भांति प्रीति सहित सराहियत रागी औ बिरागी बडभागी ऐसो आन को ॥ १ ॥ भूमि भोग करत अनुभवत जोग सुष मुनिमन अगम अलष गति जान को। गुर हर पद नेहु गेह बसि भो बिदेहु अगुन सगुन प्रभु भजन सयान को ॥२॥ कहनि रहनि एक बिरति बिबेक नीति बेद बुध संमत

पथीन निरबान को। बिनु गुन की कठिन गांठ जड चेतन की छोरी अनायास साधु सोधक अपान को ॥ ३ ॥ सुनि रघुबीर को बचन रचना की रीति भए मिथिलेस मानो दीपक बिहान को। मिख्यौ महामोह जी को कूथ्यो पोच सोच सी को जान्यो अवतारू भयो पुरुष पुरान को ॥ ४ ॥ सभा नृप गुर नर नारि पुर नभ सुर सब चितवत सुष करुनानिधान को। एकहि एक कहत प्रगट एक प्रेमबस तुलसीस तोरिए सरासन ईसान को ॥ ५ ॥ ८८ ॥

श्रीरघुनाथ की उक्ति ऋषि इ०। हे रिषिराज आजु श्रीजनक समान राजा को है, काहे ते कि आप एहि भांति ते प्रीति सहित सराहियत है तो रागी औ विरागिन के मध्य में बड़भागी ऐसो आन को है ॥ १ ॥ भूमि भोग करत अर्थात् राज भोग तो करत हैं पर वाही में जोग सुख को अनुभवत हैं। इन की गति मननशील जे मुनि तिन हूं के अगम है और को जाने। गुरु औ हर के पद में नेह है, जाको घर में रहि के बिदेह है रहे हैं निर्गुन औ सगुन रूप प्रभु के भजन में अस आन कौन सयान है ॥ २ ॥ कहनि रहनि सब एक भांति की है बैराग्य ज्ञान औ राजनीति सब बेद बुध संमत है इन को, औ मोक्ष के पथिक हैं अर्थात् स्वर्गादि के नहीं जो बिनु गुन की कठिन गांठि जड़ चेतन की है ताको बेपरिश्रम छोरि डारी है औ अपने स्वरूप को साधु कहैं भली भांति सोधक हैं ॥ ३ ॥ दीपक बिहान को कहिबे को यह भाव कि अपनी बड़ाई सुनि सकुचे ॥ ४ ॥ नृप जनक महाराज गुरु बिश्वामित्र जू औ पुर के नर नारि ॥ ५ ॥ ८८ ॥

राग मारू—सुनो भैया भूप सकल दै कान। बज्ररेष गजदसन जनकपन वेदविदित जग जान ॥१॥ घोर कठोर पुरारिसरासन नाम प्रसिद्ध पिनाकु। जो दसकंठ दियो बावों जेहि हरगिरि कियो मनाकु ॥ २ ॥ भूमि भाल भ्राजत

न चलत सो ज्यों बिरंचि को आंकु । धनु तोरै सोइ बरै जानकी राउ होइ की रांकु ॥३॥ सुनि आमर्षि उठे अवनी-पति लगे बचन जनु तीर । टरै न चांप करैं अपनो सो महा महा बल बीर ॥ ४ ॥ नमित सीस सोचहिं सलज्ज सब श्रीहत भए सरीर । बोले जनक बिलोकि सीय तन दुषित सरोष अधीर ॥ ५ ॥ सप्त दीप नव षंड भूमि के भूपति वृंद जुरे । बडो लाभु कन्या कीरति को जहँ तहँ महिप मुरे ॥६॥ डग्यो न धनु जनु वीर बिगत महि किधौं कहुं सुभट दुरे । रोषि लषन बिकट भृकुटी करि भुज अरु अधर फुरे ॥ ७ ॥ सुनहु भानु कुलकमल भानु जो अब अनुसासन पावौं । को बापुरो पिनाकु मेलि गुन मंदर मेरु नवावौं ॥ ८ ॥ देषौ निज किंकर को कौतुक क्यौं कोदंड चढावौं । लै धावौं भंजौं मृनाल ज्यौं तौ प्रभु अनुग कहावौं ॥ ९ ॥ हरषे पुर नर नारि सचिव नृप कुअर कहे बर बैन । मृदु मुसुकाइ राम बरज्यो प्रिय बंधु नयन दै सैन ॥ १० ॥ कौसिक कह्यौ उठहु रघुनंदन जगबंदन बल अैन । तुलसि दास प्रभु चले मृगपति ज्यौं निज भगतनि सुषदैन ॥ ११ ॥ ८९ ॥

बंदी की उक्ति सुनो ३० । बज्र पर की रेखा जैसे नहीं मिटति है औ हाथी के दांत जैसे फेर भीतर नहीं जात तस जनक महाराज की प्रतिज्ञा है वेद में विदित है औ सब जग जानत है कि पुरारि को सरासन अति कठोर है, जाको पिनाक अस नाम प्रसिद्ध है। जो पिनाक को रावण बावँ दियो अर्थात् सनमुख न भयो, जेहि रावन ने कैलास को लघु कियो अर्थात् ढेला सम उठाय लियो ॥ १ ॥ २ ॥ भाल पर भ्राजत जो बिरंचि को अंक है सो जैसे नहीं चलत तैसे भूमि ते नहीं चलत है तेहि धनु को जो तोरै सो राजकुमारी को बरै, चाहै राजा होय चाहे

रंक होय ॥ ३ ॥ महा महा बल बीर जो रहे सो अपनो सो किए अर्थात् जेतना प्राक्रम रहा तेतना किए पर चांप न टरेउ। महा महा बल बीरन को चांप अपनो सो कियो अर्थात् जड ॥४॥५॥ जहँ तहँ महीप मुरे कहैं जहां ते उठे रहे तहँ फेरि आइ बैठे ॥ ६ ॥ फुरे फरके ॥७।८॥ क्यौं कहैं कैसे मृनाल कमलदण्ड, अनुग सेवक ॥ ९ ॥ १० ॥ अयन गृह, मृगपति सिंह ॥ ११ ॥ ८९ ॥

जबहि सब नृपति निरास भए। गुरुपद कमल बंदि रघुपति तब चांप समीप गये ॥ १ ॥ स्याम तामरस दाम बरन बपु उर भुज नयन बिसाल। पीत बसन कटि कलित कंठ सुंदर सिंधुरमनिमाल ॥ २ ॥ कल कुंडल पल्लव प्रसून सिर चारु चौतनी लाल। कोटि मदन छबि सदन बदन बिधु तिलक मनोहर भाल ॥ ३ ॥ रूप अनूप बिलोकत सादर पुरजन राजसमाजु। लषन कह्यौ थिर होहिं धरनि-धरु धरनि धरनिधर आजु ॥ ४ ॥ कमठ कोल दिगदंति सकल अँग सजग करहु प्रभु काजु। चहत चपरि सिवचांप चढावन दसरथ को जुवराजु ॥ ५ ॥ गहि करतल मुनि पुलक सहित कौतुकहि उठाइ लियो। नृपगन मुषनि समेत नमित करि सजि सुष सबहि दियो ॥ ६ ॥ आकरष्यौ सिय मन समेत हरि हरष्यौ जनक हियो। भंज्यो भृगुपति गर्व सहित तिहुलोक बिमोह कियो ॥ ७ ॥ भयो कठिन कोदंड कोलाहल प्रलय पयोद समान। चौंकें शिव बिरंचि दिसिनायक रहे मूदि कर कान ॥ सावधान ह्वै चढे बिमानन चले बजाइ निसान। उमगि चल्यौ आनंद नगर नभ जय धुनि मंगलगान ॥८॥ बिप्रबचन सुनि सषी सुआसिनि चली जानकिहि ल्याइ। कुअँर निरषि जयमाल मेलि उर

कुवरि रही सकुचाइ ॥ १० ॥ बरषहि सुमन असीसहि सुर मुनि प्रेम न हृदय समाइ । सीय राम की सुंदरता पर तुलसिदास बलि जाइ ॥ ११॥९० ॥

जबहिं इ० सु० ॥१॥ तामरस कमल दाम समूह कटि कलित कटि में धारन किए सिंधुरमनि गजमुक्ता ॥ २ ॥ कल सुंदर चौतनी टोपी, कोटि मदन छवि सदन कोटि काम के छवि के गृह ॥ ३ ॥ धरनिधर शेष, धरनी पृथ्वी धरनिधर पर्वत ॥ ४ ॥ कच्छप शूकर भगवान दिग्गज सकल अंग ते सजग होय के प्रभु कै काज करहु भाव कोई अंग ते ढीला होहुगे तो न सम्हारि सकोगे चपरि उत्साह करि ॥ ५ ॥ गहि इ० आकर्षेउ इ० यह दूनो तुकन को भाव नाटक के अनुसार है । "उत्क्षिप्तं सह कौशिकस्य पुलकैः सार्द्धं मुखैर्नामितं भूपानां जनकस्य संशयधिया साकं समास्फालितम् । वैदेहीमनसा समं च सहसाकृष्टं ततो भार्गवप्रौढ़ाहंकृतिदुर्मदेन सहितं तद्भग्नमैशं धनुः" अस्यार्थः अथ धनुर्भंगे नानारसानुभावात् चित्ररसं दर्शयितुं पद्यमवतारयाति उत्क्षिप्तमिति कौशिके वत्सलरसोजातः अत्र हर्षः संचारी हर्षात्पुलकाः सात्विका इति ज्ञानम् । भूपे भयानकरसः अत्र दैन्यं संचारी दैन्यादेवमुखनमनम् अत्र भीषणा त्रिविधा तत्प्रभावेनैव रामे भीषणत्वं जनके करुणारसोजातः अत्र ग्लानिः संचारी सा चाधे जाता आध्यत्नुभावः संशयइति ज्ञानं वैदेह्यां मधुररसोजातः मनआकर्षणमेवात्रानुभावः रामे वीररसः अत्र स्पर्द्धोद्दीपनं सा परसुरामागतोतिज्ञानम् अत्र सर्वरसानामुद्दीपनविभावोरामएव ॥६॥७॥ कोलाहल महाशब्द, पयोद मेघ दिसिनायक दिक्पाल ॥ ८ ॥ निसान नगारा ॥ ९ ॥ विप्र सतानंद ॥ १० ॥ ११ ॥ ९० ॥

राग मलार—जब दोउ दशरथकुंअर बिलोके । जनकनगर नर नारि मुदित मन निरषि नयन पल रोके ॥ १ ॥ बय किसोर घन तडित बरन तन नष सिष अंग लुभारे । दे चितु कै हितु लै सब छबि बितु बिधि निज हाथ सवारे ॥ २ ॥ संकट नृपहि सोच अति सीतहि भूप सकुचि सिर

नाए। उठे राम रघुकुल कल केहरि गुरु अनुसासन पाए ॥ ३ ॥ कौतुकही कोदंड षंडि प्रभु जय अरु जानकि पाई। तुलसिदास कीरति रघुपति की मुनिन्ह तिहुं पुर गाई ॥४॥९१॥

जब इ० जब दोऊ चक्रवर्ती कुमार कों देखे तब देखि करि जनकपुर के नर नारि अपने निमेष (पलक) कों रोके औ मुदितमन भए १ ते दोऊ राजकुमार कैसे हैं किशोर अवस्था औ मेघ औ तडित सम तन को बरण है औ नष ते सिष लों सब अंग लोभावनिहारे हैं कै हितु कहैं प्रीति करि सब जगत के छबि रूप धन लै कै चित्त दै कै ब्रह्मा ने अपने हाथ ते संवारे हैं जिन को ॥२॥ देखि कै श्रीजनक महाराज कों क्लेस भयो अर्थात् काहे को अस प्रण किया औ श्रीजानकी जी को अतिसोच भयो औ राजा सब सकुचाय के सिर नवाये भाव ए दोऊ भाई तेजस्वी देखि परत हैं कदापि इन से धनु उठा तो हम लोगों के मुंह में मसि लगी। तब गुरु अनुसासन पाए तें सुंदर जो रघुकुल हैं तिन में श्रेष्ठ जो श्रीराम सो उठे ॥ ३॥४॥ ९१ ॥

राग टोडी। मुनि पद रेनु रघुनाथ माथे धरी है। रामरुष निरषि लषन की रजाइ पाइ धराधर धरनि सुसावधान करी है ॥ १ ॥ सुमिरि गनेस गुर गौरि हर भूमिसुर सोचत सकोचत सकोची बान षरी है। दीनबंधु कृपासिंधु साहसिक सीलसिंधु सभा को सकोच कुलहू की लाज परी है ॥ २ ॥ पेषि पुरुषारथ परषि पन प्रेम नेम सीय हीय की बिशेषि बडी षरभरी है। दाहिनो दियो पिनाकु सहमि भयो मनाकु महाव्याल बिकल बिलोकि जनु जरी है ॥ ३ ॥ सुर हरषत बरषत फूल बार बार सिद्ध मुनि कहत सगुन सुभ घरी है। रामबाहु बिटप बिसाल बोडी देषियत जनकमनोरथ कलपबेलि फली है ॥ ४ ॥ लष्यो न चढावत न तानत न तोरतहूं घोर धुनि सुनि सब की समाधि टरी

है। प्रभु के चरित चारु तुलसी सुनत सुष एक ही सुलाभ सब ही की हानि हरो है ॥ ५॥९२ ॥

विश्वामित्र जू के चरण की धूरी रघुनाथ ने माथे पर धरी है। रघुनाथ की रुष देखि कै श्री लछिमन जू आज्ञा दिए । "दिसि कुंजरहु कमठ अहि कोला । धरहु धरनि धरि धीर न डोला" ॥ सो आज्ञा पाय कै धराधर जो कच्छपादिं सो भूमि को थिर करी है भाव लघु तरनी सी डगमगाय उलटि न जाय ॥ १ ॥ अब जानकी जू की खरभरी कहत हैं कि गणेश गुरु गौरी हर भूमिसुर को सुमिरि कै सोचत हैं। "कहं धनु कुलिसहु चाहि कठोरा। कहँ स्यामल मृदु गात किसोरा ॥ बिधि केहि भांति धरौं उर धीरा। सिरस सुमन कन बेधिअ हीरा" ॥ औ देवतन को संकोच देत हैं कि आप लोगन की सुद्ध संकोची बान है भाव संकोच में परि के जे न होनिहार ताहू के करनिहारे हैं हे दीनबंधु कृपासिंधु हे साहसिक अर्थात् शीघ्र कार्य सिद्ध करैया औ हे शील के समुद्र हम को सभा को संकोच औ कुल हू की लाज परी है भाव चित्त तो चाहत है कि बिनु धनु तोरे जयमाल डार देउं पर आजु लों अस हमारे कुल में काहू कन्या ने नहीं किया है, यह जो सिय हिय की विशेष खरभरी है ताको औ राजन को पुरुषारथ देखि के औ श्री जनक जू को प्रेम को नेम औ प्रतिज्ञा की परीक्षा करि के श्रीराम जू ने पिनाक को दहिना दियो अर्थात् प्रदक्षिण कियो डरि कै पिनाक लघु है जात भयो जैसे जरी को देखि कै सर्प बिकल होय सिकुर जात। देवता हर्षत संते बार बार फूल बर्षत हैं औ सिद्ध सगुन औ मुनि सुभ घरी कहत हैं पुनि सिद्धादि कहत हैं कि श्रीरामबाहु रूप बिशाल वृक्ष में श्रीजनक जू की मनोरथ रूपी कल्पलता जो फैली रही ताको फरी देखिअत है ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ एक ही सुंदर लाभ ने सब ही की हानि को हरन करी है ॥ ५ ॥ ९२ ॥

रागसारंग—राम कामरिपुचांप चढ़ायो । मुनिहि पुलक आनंद नगर नभ निरषि निसान बजायो ॥ १ ॥ जेहि पिनाक बिनु नाक किये नृप सबहि बिषाद बढायो। सोइ

प्रभु करपरसत टूट्यो जनु हुतो पुरारि पढायो ॥ २ ॥ पहिराई जयमाल जानकी जुवतिन्ह मंगल गायो। तुलसी सुमन बरषि हरषे सुर सुजस तिहूं पुर छायो ॥ ३ ॥ ९३ ॥

राम इ० सु० ॥१॥ हुतो पुरारि पढ़ायो भाव श्रीशिव जी पढ़ाय दिए रहे कि श्रीराम के छुअतै टूटि जाना ॥ २ ॥ ३ ॥ ९३ ॥

राग टोड़ी—जनक मुदितमन टूटत पिनाक के। बाजे हैं बधावने सुहावने मंगल गान भयो सुष एकरस रानी राजा रांक के ॥ १ ॥ दुंदुभी बजाइ गाइ हरषि बरषि फूल सुरगन नाचे नाचे नायकहू नाक के। तुलसी महीस देषि दिन रजनीस जैसे सूने परे सून से मनो मिटाये आंक के ॥ २ ॥ ९४ ॥

जनक इ० रांक दरिद्र ॥ १ ॥ नाक के नायक इन्द्र, दिन में जैसे चंद्रमा देखि परत हैं तैसे राजा सब देखि परे अब दूसरी उपमा कहत हैं जैसे अंक के मिटाए सुन्न सूना परत है अर्थात् बे हिसाब है जात है तस भए ॥ २ ॥ ९५ ॥

लाज तो न साजि साज राजा राउ रोषे हैं। कहा भौ चाप चढाए व्याहु ह्वै है बडे षाये बोलै षोलै सेल असि चमकत चोषे हैं ॥ १ ॥ जानि पुरजन त्रसे धीर दै लषन हसे बल इन्ह के पिनाक नीके नापे जोषे हैं। कुलहि लजावै बाल बालिस बजावै गाल कैधौ कूर काल बस तमकि त्रिदोषे हैं ॥ २ ॥ कुअर चढाई भौंहैं अब को बिलोकै सोहैं जहां तहां भे अचेत षेत कैसे धोषे हैं। देषि नर नारि कहैं साग षाइ जाए माय बाहु पीन पावरनि पीना षाय पोषे हैं ॥ ३ ॥ प्रमुदित मन लोक कोकनद कोकगन राम के प्रताप

रवि सोच सर सोषे हैं। तब के दंषैश्रा तोषे तबके लोगनि भले अब के सुनैश्रा साधु तुलसीहू तोषे हैं ॥ ४ ॥ ९५ ॥

लाज इ० । लाज तो नहीं है पर राजा जे राड हैं ते युद्ध के साज साजि के क्रोधयुक्त भए हैं । आपुस में कहत हैं चांप चढ़ाये तें कहा भयो यह विवाह बड़े खाए ते होइगो अस बोले मिआन से चोखे तरवार खींचि लिए औ सांग लिए चमकि रहे हैं अर्थात् राजा सब ॥१ बाल बालिस मूर्खों ते मूर्ख तमकि त्रिदोखे हैं त्रिदोष के बस अक बक करि रहे हैं ॥ २ ॥ ३ ॥ रघुनाथ के प्रताप रूपी सूर्य ने सोच रूपी सर को सोखि लिए ताते लोक रूप कमल औ चक्रवाक गन हर्षे ।४।९५

जयमाल जानकी जलजकर लई है । सुमन सुमंगल सगुन की बनाई मंजु मानहु मदन मालो आपु निरमई है ॥ १ ॥ राज रुष लषि गुर भूसुर सुश्रासिनिन्हि समय जमाज की ठवनि भली ठई है । चली गान करत निसान बाजे गहगहे लहलहे लोयन सनेह सरसई है ॥ २ ॥ हनो देव दुंदुभी हरषि बरषत फूल सुफल मनोरथ भो सुष सुचितई है । परजन परिजन रानी राउ प्रमुदित मनसो अनूप रामरूप रंग रई है ॥ ३ ॥ सतानंद सिष सुनि पाय परि पहिराई माल सिय पियहिय सोहत सो भई है । मानस ते निकसि बिसाल सुतमाल पर मानहु मराल पांति बैठी बनि गई है ॥ ४ ॥ हितन को लाह की उछाह की बिनोद मोद सोभा की अवधि नहीं अब अधिकई है । याते बिपरीति अनहितन को जानि लीवो गति कहै प्रगट षुनस साषी षई है ॥ ५ ॥ निज निज वेद की सप्रेम जोग छेम मई मुदित असीस विप्र बिदुषनिदई है । छबि तेहिं काल की कृपाल सीता दूलह की हुलसत हिए तुलसी के नित नई है ॥ ६॥९६ ॥

जयमाल इ० । जलजकर करकमल जयमाला महुआ औ दूब की है । "एवं तयोक्ते तमवेक्ष्य किंचिद्विस्रंसिदूर्वांकमधूकमाला । ऋजुप्रणामक्रिययैव तन्वी प्रत्यादिदेशैनमभाषमाणा" इति रघुवंशे ॥ १ ॥ लह लहे आनंदयुक्त ॥ २ ॥ ३ ॥ इहां श्रीरघुनाथ तमाल हैं मरालपांति जयमाल है ॥ ४ ॥ खुनुस खांसी खई है क्रोध रूप छईवाली खांसी रोग है ॥ ५ ॥ निज निज वेद के आशीर्वाद के मंत्र से आशीर्वाद दिए ॥ ६ ॥ ९६ ॥

राग केदारा । लेहु री लोचननि कौं लाहु । कुंअरु सुंदरु साँवरो सषि सुमुषि सादर चाहु ॥ १ ॥ षंडि हरकोदंड ठाढे जानु लंबित बाहु । रुचिर उर जयमाल राजति देत सुष सब काहु ॥ २ ॥ चितै चित हित सहित नष सिष अंग अंग निबाहु । सुकृत निज सियरामरूप बिरंचि मतिहि सराहु ॥ ३ ॥ मुदित मन बर बदन सोभा उदित अधिक उछाहु । मनहुँ दूरि कलंक करि ससि समर सूयौ राहु ॥४॥ नयन सुषमा अयन हरत सरोज सुंदर ताहु । बसत तुलसीदास उर पुर जानकी को नाहु ॥ ५॥९७ ॥

लेहु इ० । हे सखि हे सुमुखि आदर सहित चाहु कहैं देखु ॥१॥ जानु लंबित बाहू आजानु बाहु ॥ २ ॥ नख ते सिख लौं जो सब अगं अगं का निबाह है अर्थात् सब अंग जस चाही तस है तिन को प्रीत सहित चित दै चितै के अपना सुकृत औ सियराम को रूप औ ब्रह्मा की बुद्धि की सराहना करु ॥ ३ ॥ हर्षित मन है औ उछाह करि श्रेष्ठ बदन की शोभा अधिक प्रकाशित है मानो शशि ने कलंक को दूरि करि समर में राहु को मारयो है इहां राहु पिनाक है ॥ ४ ॥ ५ ॥ ९७ ॥

राग सारंग । भूप के भाग की अधिकाई । टूट्यो धनुष मनोरथ पूज्यो बिधि सब बात बनाई ॥१॥ तब ते दिन दिन उदो जनक को जब ते जानकि जाई । अब यह ब्याह सुफल

भयो जीवन त्रिभुवन बिदित बडाई ॥ २ ॥ बार बार ऐहैं पहुनाई राम लषन दोउ भाई । एहि आनंद मगन पुरबासिन्ह देहदसा बिसराई ॥ ३ ॥ सादर सकल बिलोकत रामहिं काम कोटि छबि छाई । एह सुष समउ समाज एक मुष क्यौं तुलसी कहै गाई ॥ ४ ॥ ९८ ॥

भूप इ० । सुगम ॥ ९८ ॥ टिप्पणी—उदो कहैं उदय वृद्धि, जाई कहैं जन्मी ॥२॥ पुरवासी श्रीरघुनाथ बार२ पहुनाई में जनकपुर आवेंगे और हम लोग दर्शन करेंगे इस आनंद में देह की सुधि भूले हैं ॥ ३ ॥

राग सोरठ—मेरे बालक कैसे धौं मग निबहहिंगे । भूष पियास सीत स्रम सकुचनि क्यौं कौसिकहिँ कहहिँगे ॥ १ ॥ को भोरही उबटि अन्हवैहैं काढि कलेऊ देहै । को भूषन पहिराइ निछावरि करि लोचनसुष लैहै ॥२॥ नयन निमेषनि ज्यौं जोगवै नित पितु परिजन महतारी । ते पठए रिषिसाथ निसाचर मारन मषरषवारी ॥३॥ सुंदर सुठि सुकुमार सुकोमल काकपच्छधर दोऊ । तुलसी निरषि हरषि उर लैहौं बिधि ह्वै है दिन सोऊ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

माता की उक्ति मेरे इ० । सकुचनि संकोच ते ॥१॥ २ ॥३॥ काकपक्ष जुल्फ ॥ ४ ॥ ९९ ॥

रिषि नृप सीस ठगौरी सी डारी । कुलगुरु सचिव निपुन नेवनि अवरेव न समुझि सुधारी ॥ १ ॥ सिरिससुमन सुकुमार कुअर दोउ सूर सरोष सुरारी । पठए बिनहि सहाय पयादेहि केलिबान धनु धारी ॥ २ ॥ अति सनेह कातरि माता कहै लषि सषि वचन दुषारी । बादि बीर जननी जीवन जग छत्रजाति गति भारी ॥ ३ ॥ जो कहिहै फिरे

राम लषन घर करि मुनिमषरषवारी। सो तुलसी प्रिय मोहि लागि है ज्यों सुभाय सुत चारी ॥ ४ ॥ १०० ॥

ऋषि इ० । बशिष्ट जू औ मंत्री सब विचार में बिचच्छन रहे पर अवरेव को काहू ने समुझि के न सुधारी ॥ १ ॥ सुरारी राक्षस ॥२॥ कातारि विह्वल ॥ ३ ॥ ४ ॥ १०० ॥

जब ते लै मुनि संग सिधाये। राम लषन के समाचार सषि तब ते कछुअनपाये ॥१॥ बिनु पानही गवन फल भोजन भूमि सयन तरुछाहीं। सर सरिता जल पान सिसुन के साथ सुसेवक नाहीं ॥ २ ॥ कौसिक परमकृपाल परमहित समरथ सुषद सुचाली। बालक सुठि सुकुमार सकोची समुझि सोच मोहि आली ॥ ३ ॥ बचन सप्रेम सुमित्रा के सुनि सब सनेह बस रानी। तुलसी आइ भरत तेहि औसर कही सुमंगल बानी ॥ ४॥ १ ॥

जबते इ० सु० ॥१॥२॥सकोची कहिवे को यह भाव कि संकोच ते कछु न कहैंगे ॥ ३॥४॥१०१ ॥

सानुज भरत भवन उठि धाए । पितुसमीप सब समाचार सुनि मुदित मातु पहि आए ॥ १ ॥ सजल नयन तन पुलक अधर फरकत लषि प्रीति सुहाई । कौसल्या लिए लाइ हृदय बलि कही कछु है सुधि पाई ॥ २ ॥ सतानंद उपरोहित अपने तिरहुतिनाथ पठाए। षेम कुसल रघुबीर लषन की ललित पत्रिका ल्याए॥ दलि ताडका मारि निसिचर मष राषि विप्रतिय तारी। दै बिद्या लै गए जनकपुर हैं गुरु संग सुषारी ॥ ४ ॥ करि पिनाकुपन सुता स्वयंबर सजि नृप कटक बटोरयौ। राजसभा रघुबर मृनाल

ज्यौं सम्भुसरासन तोर्यो ॥ ५ ॥ यों कहि सिथिल सनेह बंधु दोउ अंबु अंक भरि लीन्हे। बार बार मुष चूंबि चारु मनि बसन निछावरि कीन्हे ॥ ६ ॥ सुनत सुहावनि चाह अवध घर घर आनंद बधाई। तुलसिदास रनिवास रहस बस सषी सुमंगल गाई ॥ ७॥१०२ ॥

सानुज इ० पद सुगम ॥ १०२ ॥

राग कान्हरा। राम लषन सुधि आई बाजै अवध बधाई। ललित लगन लिषि पत्रिका उपरोहित की कर जनक जनेस पठाई ॥ १ ॥ कन्या भूप बिदेह की रूप की अधिकाई। तासु स्वयंबर सुनि सबै आए देस देस के नृप चतुरंग बनाई ॥ २ ॥ पन पिनाक पवि मेरु ते गरुता कठिनाई। लोकपाल महिपाल बान बान दूत दसमुष सके न चांप चढाई ॥ ३ ॥ तेहि समाज रघुराज के मृगराज जगाई। भंजि सरासन संभु जग जय कल कीरति तिय तियमनि सिय पाई ॥ ४ ॥ पुर घर घर आनंद महा सुनि चाह सुहाई। मातु मुदित मंगल सजै कहै मुनिप्रसाद भए सकल सुमंगल माई ॥ ५ ॥ गुरुआयसु मंडप रच्यौ सब साज सजाई। तुलसिदास दसरथ बरात सजि पूजि गनेसहि चले निसान बजाई ॥ ६॥१०३ ॥

राम इ०। जनेस राजा ॥ १ ॥ २ ॥ प्रतिज्ञा किया भया जो पिनाक है सो मेरु ते अधिक गुरु है औ बज्र ते अधिक कठिन है बान बानासुर ॥ ३ ॥ तेहि समाज में रघुराज के मृगराज जो श्रीराम तिन को जगावत भए अर्थात् उत्साह बढ़ावत भए "बीर बिहीन मही मैं जानी" इत्यादि बचन ते तिन्हों ने शंभु को सरासन तोरि के जगत में जय आदि पाई ॥ ४ ॥ इहां चाह को अर्थ बांछित है ॥ ५ ॥ इहां गनेश के पूजन हेतु मंडप बनाए ॥ ६॥१०३ ॥

राग केदारा । मन में मंजु मनोरथ होरी । सो हर गौरि प्रसाद एक ते कौसिक कृपा चौगुनो भो री ॥ १ ॥ पन परिताप चापचिंता निसि सोच सकोच तिमिर नहिं थोरी । रवि कुल रवि अवलोकि सभा सर हितचित बारिज बन बिकसो री ॥ २ ॥ कुंअर कुंअरि सब मंगल मूरति नृप दोउ धरम धुरंधर धोरी । राज समाज भूरिभागी जिन्ह लोचन लाहु लह्यौ इक ठोरी ॥ ३ ॥ व्याह उछाह राम सीता को सुकृत सकेलि बिरंचि रचोरी । तुलसिदास जानै सोई यह सुष जाकी उर बसति मनोहर जोरी ॥ ४॥१०४ ॥

मन इ० । मिथिला के सखिन की उक्ति है । री सखी जो मन में एक मनोरथ रह्यो अर्थात् श्री जानकी जी को विवाह को सो हर गौरी के प्रसाद औ कौसिक की कृपा ते चौगुनो भयो । भाव चारो राज कुमारिन को व्याह देखिवे में आयो ॥ १ ॥ प्रतिज्ञा करिवे को जो परिताप औ चाप की गरुआई की जो चिंता सोई रात्रि रही औ तेहि करि जो सोच औ संकोच सोई तेहि राति की घनी अंधिआरी रही तेहि करि हितनि के चितरूपी कमल सभारूपी तड़ाग में संपुटित भए रहे ते रविकुल रवि जो श्रीराम तिन को देखि कै प्रफुल्लित भए ॥ २॥३॥४॥१०४ ॥

राजत राम जानकी जोरी । स्याम सरोज जलद सुंदर बर दुलहिनि तडित बरन तन गोरी ॥१॥ व्याह समय सोहति बितानतर उपमा कहुं न लहति मति मोरी । मनहु मदन मंजुल मंडप महं छबि सिंगार सोभा सोउ थोरी ॥२॥ मंगलमय दोउ अंग मनोहर ग्रथित चूनरी पीत पिछोरी । कनक कलस कहुं देत भांवरी निरषि रूप सारद भइ भोरी ॥ ३ ॥ मुदित जनक रनिवास रहसबस चतुर नारि चितवहिं तन

तोरी। गान निसान बेद धुनि सुनि सुर बरषत सुमन हरष कहै कोरी॥४॥ नयनन को फल पाइ प्रेमबस सकल असीसत ईस निहोरी। तुलसी जेहि आनंद मगन मन क्यौं रसना बरनै सुष सोरी॥ ५॥ १०५॥

राज इ०॥ १॥ व्याह के समै में दूलह दुलहिन मंडप में सोभत हैं तिन की उपमा हमारी मति कतहू नहीं पावति है। मानो काम रूप सुंदर मंडप के तरे छवि रूप दुलहिन औ शृंगार रूप दूलह हैं पर एहू कहते नहीं बनत है क्योंकि इन की शोभा थोड़ी है अर्थात् जानकी राम सम नहीं॥ २॥ दुलहिन दूलह को सब अंग मंगल मै औ मनोहर हैं, पीत पट को चूनरी के संग ग्रंथिबंधन भयो है॥ ३॥ रहस आनंद॥ ४॥ री सखी जेहि आनंद में मन डूबि गयो ताको जिह्वा कैसे बरनै॥ ५॥१०५॥

दूलह राम सिया दुलही री। घन दामिनि बर बरन हरन मन सुंदरता नष सिष निबही री॥ १॥ व्याह बिभूषन बसन बिभूषित सषि अवली लषि ठगि सि रहीरी। जीवन जनम लाहु लोचनफल है इतनोइ लह्यो आजु सहीरी॥२॥ सुषमा सुरभि सिंगार छीर दुहि मयन अमियमय कियो है दहीरी। मथि माषन सियराम संवारे सकल भुवन छबि मनहु महीरी॥३॥ तुलसिदास जोरी देषत सुष सोभा अतुल न जाति कहीरी। रूपरासि बिरची बिरंचि मानो सिलालवनि रति काम लहीरी॥ ४॥ १०६॥

दूलह इ०॥ १॥ २॥ सुखमा रूप धेनु ते सिंगार रूप दूध को दुहि कै काम रूप अहीर ने अमृत रूप दही जमायो तेहि दही को मथि के माखन काढ्यो ताको श्री सीताराम को बनायो औ सकल भुअन की छवि मानो माठा है अर्थात् निकाम जानि जो बहाय दियो सो है॥ ३॥ रूप रूपी राशि मानो ब्रह्मा ने सीताराम को बिरची औ काटे

पीछे की जो विनिआ सो रति काम ने पाई। शिला जो बालि तेहि कै कनन रति काम पाई "उञ्छः कणश आदानं कशाद्यर्ज्जनंशीलम्" इति यादवकोशे। ४।१०६॥

जैसि ललित लषन लाल लोने। तैसिऐ ललित उर्मिला परस्पर लषत सुलोचन कोने॥ १॥ सुषमा सारु सिंगारु सारु करि कनक रचे है तेहि सोने। रूप प्रेम परमिति न परत कहि बिथकिरह्यो है मतिमौने॥ २॥ सोभासील सनेह सोहावनो समउ केलि गृह गोने। देषि तियन के नयन सफल भये तुलसिदास हुं के होने॥ ३॥ १०७॥

जैसे इ०॥ १॥ परम सोभा को सारांश औ शृंगार को सोना करि के तेहि सोना ते लषनलाल औ उर्म्मिला जू को बनाए। भाव सुखमा के सारांश ते लषनलाल को औ शृंगार के सारांश ते उर्म्मिला जू को रूप औ प्रेम के अवधि हैं ताते कही नहीं पराति है। विशेष थकि के मति मौन ह्वै रही है श्री उर्म्मिला जू को श्याम बरण है ताते शृंगार को सारांश कहे "हिरण्यवर्णा सीता स्यान्मण्डवी पाटलप्रभा उर्म्मिला श्यामवर्णाभा स्रुतिकीर्तिः समप्रभा" इति नारदपञ्चरात्रे "पाटलः श्वेतरक्त-मिश्रितोवर्णः"॥२॥ केलिगृह कोहबर जावे को समै को शोभा शील औ सुंदर सनेह जो है ताको देखि कै तियन के नैन सुफल भए तुलसीदास को अब होनिहार है॥ ३॥१०७॥

राग बिलावल—जानकीबर सुंदर माई। इंद्र नीलमनि स्याम सुभग अंग अंग मनोजनि बहु छबि छाई॥ १॥ अरुन चरन अंगुली मनोहर नष दुतिवंत कछुक अरुनाई। कंज दलनि पर मनहु भौम दस बैठे अचल सुसदसि बनाई॥ २॥ पीन जानु उर चारु जडित मनि नूपुर पद कल मुषर सोहाई। पीत पराग भरे अलिगन जनु जुगल जलज लषि रहे लोभाई॥ ३॥ किंकिनि कनक कंज अवली मृदु मरकत

सषरि मध्य जनु जाई। गई न उपर सभीत नमित मुष बिकसि चहूं दिसि रही लोनाई ॥ ४ ॥ नाभि गभीर उदर रेषा बर उर भृगु चरनचिन्ह सुषदाई। भुज प्रलंब भूषन अनेक जुत बसन पीत सोभा अधिकाई ॥ ५ ॥ जज्ञोपवीत विचित्र हेममय मुक्ता माल उरसि मोहि भाई। कंदु तडित बिच जनु सुर पति धनु निकट बलाका पांति चलि आई ॥६॥ कंबु कंठ चिबुकाधर सुंदर क्यौं कहौं दसनन की रुचिराई। पदुम कोस महं बसे बज्र मानो निज संग तडित अरुन रुचि लाई ॥ ७ ॥ नासिका चारु ललित लोचनभ्रू कुटिल कचनि अनुपम छबि पाई। रहे घेरि राजीव उभय मानो चंचरीक कछु हृदय डेराई ॥ ८ ॥ भाल तिलक कंचन किरीट सिर कुंडल लोल कपोलनि झाई। निरषहिं नारि निकर बिदेह पुर निमि नृप की मरजाद मिटाई ॥ ९ ॥ सारद सेस संभु निसि वासर चिंतत रूप न हृदय समाई। तुलसिदास सठ क्यौं करि बरने यह छबि निगम नेति कहि गाई ॥१०॥१०८॥

जानकी इ०। सखी प्रति सखी की उक्ति अरी माई जानकी वर सुंदर हैं, मरकत मणि सम स्याम है औ सुंदर सब अंग अंगानि में अनेक कामन की छबि छाय रही है ॥ १ ॥ लाल चरण है अंगुरी मन हरनिहारी है, नख दुतिवंत जे है ते कछुक अरुनाई लिए हैं। मानों कमल दलनि के ऊपर सुंदर अचल सभा बनाइके दश मंगल के तारा बैठे हैं ॥ २ ॥ जानु पुष्ट हैं औ सुंदर जंघा हैं औ चरण में मनिन ते जड़ित सुंदर सोने के नूपुर हैं सो सुंदर शब्द करत हैं सो नूपुर नहीं हैं पुष्पन के पीत धूरी तें भरे भंवर के समूह हैं मानो युगल चरण रूप युगल कमल को देखि के लोभाय के रहि गए हैं ॥ ३ ॥ सोनन की किंकिनी नहीं है कमल कलिन की पांति है। सो मरकत सिखर के मध्य में मानों उत्पन्न भई है। इहां मरकत सिखर श्री रघुनाथ हैं, मध्यभाग

कटिदेश है ते किंकिनी रूप कली सब डर ते ऊपर न गई। नीचे मुख करि बिकसीं तिन के बिकसने की सुंदरताई चहुं दिशि छाय रही ॥४॥५॥ उर में बिचित्र सुवर्ण मय जनेऊ औ मोतिन की माला जो है सो हम को भाई, मानो स्याम मेघ बिजुरी के बीचि इन्द्र धनुष है तेहि के निकट बकुलन की पांति चली आई है। इहां मेघ श्रीराम हैं औ पीत बसन बिजुरी है, सुरपाति धनु यज्ञोपवीत है, मोती की माला बक-पांति है ॥ ६ ॥ शंखसम कंठ है, ठोड़ी औ ओठ सुंदर हैं औ दांतन की रुचिराई कैसे कै कहों अर्थात् कहिबे योग्य नहीं है। मानो कमल के कोश में हीरागण अपने संग में बिजुरी औ सूर्य की सुंदराई लिए बसे हैं वा सुंदर ललाई रूप तडिता को लिए बसे हैं। लाल रंग की बिजुरी भी लिखी है ॥ ७ । सुंदर नासा सुंदर लोचन टेढी भौंह औ जुलुफन ने उपमा रहित छबि पाई है, मानों नेत्र नहीं हैं युग कमल हैं, भौंह औ जुलुफ नहीं हैं भौंरन के समूह हैं, ते भ्रमरगण कछु हृदय में डेराइके युगल नेत्र रूप कमल कों घेरि रहे हैं। भाव ताते बैठत नहीं हैं। इहां डरावनिहारी पलक रूप पंखा है ॥८॥ लोल चंचल झांई परि-छाहीं, निकर समूह, निमिकुल की मरजादा मिटाई अर्थात् एकटक ते निरखहिं ॥ ९॥१०॥१०८ ।

राग कान्हरा। भुजनि पर जननी वारि फेरि डारी।
क्यौं तोर्यो कोमल कर कमलनि संभुसरासन भारी ॥ १ ॥
क्यौं मारीच सुबाहु महा बल प्रबल ताडका मारी। मुनि-
प्रसाद मेरे राम लषन की बिधि बडि करबर टारी ॥ २ ॥
चरन रेनु लै नयननि लावति क्यौं मुनिबधू उधारी। कहो
धौं तात क्यौं जीति सकल नृप बरी है बिदेहकुमारी ॥३॥
दुसह रोष मूरति भृगुपति अति नृपति निकर षयकारी।
क्यौं सौंप्यो सारंग हारि हिय करिहै बहुत मनुहारी ॥ ४ ॥
उमगि उमगि आनंद बिलोकति बधुन सहित सुतचारी।
तुलसिदास आरती उतारति प्रेममगन महतारी ॥५॥ १०९॥

भुजन इ० हाथ चहुं ओर भुजन पर फिरायके जननी ने नेव-छावरि करी ॥ १ ॥ जब रघुनाथ सकोच बस उत्तर न दिए तब आप ही समाधान करति हैं कि मुनि के प्रसाद तें मेरे राम लखन की विधाता ने अनेक अल्पायु टारी ॥ २ ॥ चरणरेणु को नयनन में लगाइवे को यह भाव कि बिरह करि नेत्र संतप्त रहे तिन को शीतल करति हैं। अब फेरि अधिक प्रेम करि पूछति हैं कि कैसे अहल्या को तारी ॥ ३ ॥ खयकारी क्षयकारी, मनुहारी मनावन ॥ ४ ॥

मुदित मन आरती करै माता। कनक बसन मनि वारि-बारि वर पुलक प्रफुल्लित गाता ॥ १ ॥ पालागन दुलहिनिहि सिषावति सरिस सासु सत साता। देहिँ असीस ते बरिस कोटि लगि अचल होउ अहिवाता ॥ २ ॥ राम सीय छबि देषि जुबति जन करहिं परस्पर बाता। अब जान्यो साचेहु सुनो सषि कोविद बडो बिधाता ॥ ३ ॥ मंगल गान निसान नगर नभ आनंद कह्यो न जाता। चिरजीवहु अवधेस सुअन सब तुलसिदास सुषदाता ॥ ४॥११० ॥

इति श्री रामगीतावल्यां बालकाण्डः सम्पूर्णः ॥

मुदित इ०सु० ॥१॥ श्री कौशल्या जू दुलहिनिन को अपने सरिस सातौ सै सासुन को पैलगी करिवे को सिखावति हैं ॥ २ ॥ विधाता बड़ा पण्डित है कहिवे को यह भाव कि समान जोड़ी मिलाय दियो ॥ ३ ॥ नगर औ आकाश में मंगल गान होत है औ नगारे बाजत हैं, दोऊ ठौर को आनन्द कहा नहीं जात है, सब असीस देत हैं कि अव-धेश के सब सुअन तुलसीदास के सुखदाता चिरंजीवहु ॥४॥११०॥

दो० । मंगल श्री सरजू सरित, मंगल बिपिन प्रमोद। मंगल सीता राम जू, जो मोदहु को मोद ॥ १ ॥ युगल चन्द परिकर युगल, चरन-रेनु सिर नाय। हरिहर सम मतिमंदहू, टीका लई बनाय ॥ २ ॥ इति श्रीरामगीतावलीप्रकाशिकाटीकायां श्री सीतारामकृपापात्र श्रीसीता-रामीय हरिहरप्रसाद कृतौ बालकाण्डः समाप्तः। श्रीसीतारामाभ्यां नमः ॥

रामच
का
रामच
रामाय
मानस
कविर
वैराग
सटी
श्रीर
हरि
"
"
"
"
"